अथ अध्याय : दो

सञ्जय बोले -

अश्रुपूर्ण आखें धुंधलाई कायर होते ग्रस्तविषाद

कहने लगे उस अर्जुन को मधुसूदन यह सम्वाद !

तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम्

विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः !! १

श्रीभगवान् बोले --

यह कायरता कहाँ से आई इस विषम स्थिति में

हे अर्जुन अनार्यसुख यह अपकारी स्वर्गकीर्ति में

कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम्

अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन !! २

लिंगहीन न बनो पार्थ तेरे लिए यह उचित नहीं

क्षुद्रचित्त की दुर्बलता यह छोड़ उठो परंतपस्वी !

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते

क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप !!३

अर्जुन बोले -

कैसे युद्ध करुं विरुद्ध भीष्म द्रोण के मधुसूदन
वाणों से रणभूमि में जिन्हें पूजता मैं अरिसूदन
कथं भीष्ममहं सङ्ख्ये द्रोही च मधुसूदन
इषुभि: प्रति योत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन !!४

श्रेष्ठ गुरु न मारकर जग में भिक्षाभोजन अच्छा
गुरु हिंसा से प्राप्त भोग तो मानो रक्तसनी इच्छा
गुरुन्हत्वा हि महानुभावान् श्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यमपीह लोके
हत्वार्थकामांस्तु गुरुनिहैव भुञ्जीय भोगान् रुधिरप्रदिग्धान् !!५

युद्धायुद्ध में श्रेष्ठ पता न हम जीतें या वे जीतें
धृतराष्ट्रजन खड़े सामने उन्हें मार हम न जीयें !
न चैतद्विद्म: कतरन्नो गरीयो यद्वा जयेम यदि वा नो जयेयु:
यानेव हत्वा न जिजीविषामस्तेऽवस्थिता: प्रमुखे धार्तराष्ट्रा: !!६

भय दोष से मरा पूछता मैं तुझे धर्ममूढमनधारी

तेरी शरण शिष्य तेरा हूँ मुझे कहें जो हितकारी

कार्पण्यदोषोपहतस्वभाव: पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेता:

यच्छ्रेय: स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् !! ७

देखता नहीं शोक हटेगा इंद्रियाँ जो सुखा रहा

चाहे धरा सम्पन्न मिले या निर्वैर देव की सत्ता !!

न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद् यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम्

अवाप्य भूमावसपत्नमृद्धं राज्यं सुराणामपि चाधिपत्यम् !! ८

सञ्जय बोले -

ऐसा कहकर हृषीकेश को गुडाकेश हे तपीपरम्

नहीं युद्ध गोविन्द करुंगा बैठ गया हो शांतवचन

एवमुक्त्वा हृषीकेशं गुडाकेश: परन्तप !

न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह !!९

हृषिकेश बोले मुसकाकर हे भारत शोकमगन

दोनों ओर की सेना के मध्य अपना ये बचन !!

तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत !

सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः !! १०

श्रीभगवान् बोले -

करते शोक अशोच्य में कहते तुम जस प्रज्ञावान

गए या जो नहीं गए का शोक नहीं करते विद्वान

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे !

गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः !! ११

न मैं या तुम नहीं थे पहले या ये राजा सत्य नहीं

और नहीं हम होंगे सारे आगे यह भी सत्य नहीं!

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः

न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् !!१२

जैसे देह में इस देही के बच्चा बूढा और जवान
ऐसे देह दूजा मिलते यहाँ भ्रमित न धीरजवान !!
देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति !!१३
भोग स्वाद कौन्तेय तो शीत घाम सुखदुख देते
इन्हें सहन करो हे भारत ये अनित्य आते जाते
मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदु:खदा:
आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत !१४
पुरुषश्रेष्ठ जिस पुरुष को विषय नहीं देता व्यथा वह
धीर दु:खसुखसमान निश्चित हो जाता सुधा
यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ
समदु:खसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते !!१५
नहीं असत् भाव विराजे न अभाव है सत् का
तत्वदर्शियों ने देखा है रुप उभय ही तत्व का !!

नासतो विद्युते भावो नाभावो विद्यते सतः

उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः !! १६

उसे जानो अविनाशी जिससे भरा जगत सारा

नहीं अंत इस अव्यय का कोई भी करनहारा !!

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम्

विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति !!१७

अन्तवान इस देह के नित्य समझो देही को

अप्रमेय अविनाशी भी अतः भारत युद्ध करो !!

अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः

अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत !!१८

जो मानते मारनेवाला तथा इसे जो मृत गाता

वे दोनों नहीं जानते ये न मारते न मारा जाता !

ये एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम्

उभौ तौ न विजानीतो नारंग हन्ति न हन्यते !!१९

न उगता मरता कभी होकर फिर यह न होता

शाश्वत नित्य पुराण अज नाशवान तन न मरता

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः

अजो नित्यो शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे !! २०

जो पुरुष अविनाशी अव्यय अज नित्य को जानता

कैसे पार्थ किसे वह मारे और किसे मरवा सकता !!२१

वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम्

कथं से पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम् !!

जीर्ण वस्त्र नर जैसे छोड़ अन्य नया चढाता

वैसे देही देह पुराना त्याग नए को अपनाता !!

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि !

तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही !! २२

शस्त्र इसे न मार सकता न जला सकता अगन

एवं जल न भीगो सकता न सुखा सकता पवन !

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः

न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः !! २३

यह अकाट्य अदाह्य है न यह भीगने योग्य भी

नियत सर्वत्र अचल है तथा सनातन नित्य भी !!

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च

नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः !! २४

अव्यक्त चिंतनपरे अविकारी भी कथित यह

ऐसा ही इसे मानकर शोक न कर उचित यह !!

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते

तस्मादेव विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि !!२५

अगर इसे तुम मानते सदा जन्म मरन वाला

तोभी शोक महाबाहो ऐसा नहीं शोभावाला !!

अथवा चैनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम्

तथापि त्वं महाबाहो नैवं शोचितुमर्हसि !!२६

जन्मे का मृत्यु निश्चित एवं मृत का जन्म निश्चित

अत: अतज्य इस अर्थ में शोक तेरा नहीं उचित !

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य चैनं

तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि !! २७

जीव पूर्व से अव्यक्त है जन्म बाद व्यक्त भारत

मरकर भी अव्यक्त ही फिर यहाँ कैसा आरत !

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत

अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना !! २८

कोई देखे आश्चर्य सा अन्य कहे आश्चर्य सा

कोई सुने आश्चर्य मान एवं इसे नहीं जानता !!

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनमाश्चर्यवद्वदति तथैव चान्य:

आश्चर्यवच्चैनमन्य: श्रृणोति श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित् !!२९

देही नित्य अवध्य यह भारत सबके देह का

अत: सारे जीव हेतु अर्थ नहीं तेरे क्लेश का !!

देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत

तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि !!३०

निज धर्म देखकर भी उचित नहीं कपकपाना

धर्ममय रण से अधिक क्षात्रहित न अन्य बाना !

स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि

धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते!३१

हरि कृपा से सामने खुला मिला है स्वर्ग द्वार

सुखी पार्थ क्षत्रिय जो पाते रण इस प्रकार !!३२

यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्

सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् !!

नहीं करोगे युद्ध यदि तुम जो रूप है धर्म का

इससे पाप पाओगे त्यागी यश निज धर्म का !३३

अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं सङ्ग्रामं न करिष्यसि

ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि !!

प्राणी भी बातें करेंगे तेरी अमिट अकीर्ति की

आशावन्तों के लिए मृत्यु बड़ी अकीर्ति ही !!३४

अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम्

सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते !!

भयवश रणछोड़ कहेंगे तुमको ये महारथीगण

एवं तुम जिनमें महान हो प्राप्त होगा क्षुद्रपन !!

भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः

येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम् !!३५

बहुत से अपशब्द कहेंगे तेरे जो न हितकारी

तेरे बल की निंदा से बड़ा क्या हो दुःखकारी !!

अवाच्यवादांश्च बहून्वदिष्यन्ति तवाहिताः

निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम् !!३६

यदि मरे तो स्वर्ग मिले जीतकर भूभोग करोगे

अतः उठो हे कौन्तेय तेरा प्रण था युद्ध करोगे !

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्

तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः !!३७

सुखदुख समान कर लाभहानि जीतहार में

पाप नहीं होगा अतः जुड़ जा युद्धाचार में !!३८

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ

ततो युद्धाय युञ्जस्व नैवं पापमवाप्स्यसि !!

साङ्ख्य में कही तुमसे कर्मयोग में इसे सुनो

समबुद्धि से युक्त पार्थ कर्म बन्धन दूर करो !!३९

एषा तेऽभिहिता साङ्ख्ये बुद्धिर्योगे त्विमां श्रृणु

बुद्धया युक्तो यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहास्यसि !!

यहाँ नहीं आरम्भ का क्षय न उलटा फल देता है

इस धर्म का अल्पयोग भी महात्रास हर लेता है !

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यायोजन न विद्यते

स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् !! ४०

निश्चययुक्त बुद्धि कुरुनंदन इस प्रसंग में एक ही

बहुशाखा अनन्त होगी जिसकी बुद्धि एक नहीं

व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन

बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम् !!४१

अज्ञानी प्रवचन करते वाणी को सजा सजाकर

वेदपाठफल रसिक पार्थ कुछ नहीं इससे इतर !

कर्म विशेष अनेक बताते भोग ऐश्वर्य पाने को

काममग्न को स्वर्ग श्रेष्ठ जन्मकर्मफल वाले जो!

यामिमां पुष्पिका वाचं प्रवदन्त्यविपश्चित:

वेदवादरता: पार्थ नान्यदस्तीति वादिन: !!४२

कामात्मान: स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम्

क्रियाविशेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति !! ४३

भोग ऐश्वर्य में डूब रहा उसके वश में चित्त

एकनिष्ठ वह बुद्धि रह न पाती समाधिस्थ !!४४

भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम्

व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते !!

वेद त्रिगुणविषय वाले अर्जुन बनो तीन गुणहीन

निर्द्वन्द्व नित श्रद्धावंत योगक्षेम बिन आत्मप्रवीन

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन

निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्४५

परिपूर्ण जलाशय को क्षुद्रजल से जैसा काम

ज्ञानपूर्ण ब्राह्मण को इन वेदों से उतना काम !४६

यावानर्थ उदपाने सर्वतः सम्प्लुतोदके

तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः !!

कर्म में ही अधिकार तेरा फलों में कभी नहीं

कर्मफल का हेतु न बन हो अकर्म में संग नहीं !!

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि !! ४७

कर्म करो योगस्थ रहके संग तजके हे धनंजय

फलाफल में सम होके समता योग का परिचय !!

योगस्थ: कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय

सिद्ध्यसिद्धयो: समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते !!४८

कर्म सकाम निकृष्ट अति ज्ञानयोग से धनंजय

अतः ज्ञान की शरण लो फल का हेतु दयनीय !!

दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनञ्जय

बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणा: फलहेतव: !!४९

बुद्धियुक्त इस देह में तजते पुण्य पाप युगल

अतः योग से जुड़ो योग ही कर्मों में कौशल !५०

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते

तस्माद्योगाय युञ्जस्व योग: कर्मसु कौशलम् !

बुद्धियुक्त मनसाधक कर्मजन्य फल हटाकर

पद निर्दोष पा लेते जन्मबंध से मुक्ति पाकर !५१

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिण:

जन्मबन्धविनिर्मुक्ता: पदं गचच्छन्त्यनामयम् !

जब ये बुद्धि मोहपंक को पूर्णतः तर जाएगी

तब श्रुतश्रोतव्य से उसे विरक्ति मिल जाएगी !५२

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति

तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च !!

श्रुतिभ्रमित तेरी बुद्धि जब अचल हो जाएगी

अटल समाधिकाल में योगप्राप्ति हो पाएगी !!५३

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला

समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि !!

अर्जुन बोले -

स्थितप्रज्ञ व समाधिस्थ के चिह्न प्रभु क्या होते

स्थिरबुद्धि कैसे बोलते कैसे टिकते कैसे चलते

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव

स्थितधी: किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम्!

श्रीभगवान बोले -

जब मनोगत सकल काम हे पार्थ हट जाता

तुष्ट आप से आप में स्थितप्रज्ञ तो कहलाता !५५

प्रजाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान्

आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते !!

दु:ख में अनुद्वेगमन एवं सुख में इच्छात्यागी

रागक्रोधभय से विलग मुनि कहाते स्थितधी!५६

दु:खेष्वनुद्वेगमना: सुखेषु विगतस्पृह:

वीतरागभयक्रोध: स्थितधीर्मुनिरुच्यते !!

जो सर्वत्र शुभाशुभ पाकर रहता अभिस्नेहरहित

न स्वागत न द्वेष करता उसकी प्रज्ञा सुप्रतिष्ठित

य: सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम्

नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता !! ५७

जैसे कछुआ अंगों को सब ओर से करे एकत्रित

जब यह हटे इन्द्रियसुख से उसकी प्रज्ञा प्रतिष्ठित

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता !!५८

निराहारी देहियों का विषय निवृत्त हो जाता

रसवर्जन तो परम् को देखकर ही हो पाता !!५९

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः

रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते !!

साधना करते हुए दक्ष पुरुष के भी कौन्तेय

मन को मथनीय इन्द्रियाँ हर लेती है बल से !!६०

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः

इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः !!

उन सबको मेरे परायण योगरत बैठे संयमित

वश में जिसकी इन्द्रियाँ उसकी प्रज्ञा सुस्थित६१

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः

वशे हि यस्य इन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता !!

विषय ध्यान से पुरुष का उनसे संग उग आता

संग से इच्छा जगती इच्छा से क्रोध जग जाता ! ६२

क्रोध से सम्मोह मोह से स्मरण बिगड़ जाता

स्मृतिभ्रंश से बुद्धिक्षय बुद्धिक्षय से गिर जाता !६३

ध्यायतो विषयान्पुंस: सङ्गस्तेषूपजायते

सङ्गात्संजायते काम; कामात्क्रोधोऽभिजायते !

क्रोधाद्भवति सम्मोह:सम्मोहात्स्मृतिविभ्रम:

स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति !

किन्तु रागद्वेष से दूर जो आत्मवश हो जाता

इन्द्रियाँ विषयों में रमते वह प्रसाद पा जाता !६४

इस प्रसाद से सब दु:खों की हानि हो जाती

मुदित मन की बुद्धि तो शीघ्र स्थिर हो जाती!६५

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन्

आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति !!६४

प्रसादे सर्वदु:खानां हानिरस्योपजायते

प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धि: पर्यवतिष्ठते !!६५

योगहीन को बुद्धि न होती न तो उसमें भावना

शांति नहीं अभाव में तो सुख क्या शांति बिना !

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना

न चाभावयत: शान्तिरशान्तस्य कुत: सुखम् !६६

इन्द्रियों में रमता मन उसके पीछे चल पड़ता

जल में नाव को वायुवत् मन प्रज्ञा को हरता !६७

इन्द्रियाणां हि चरणों यन्मनोऽनुविधीयते

तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि !!

अत: महाबाहो जिसकी हर ओर से संयमित

विषयों में सब इन्द्रियाँ उसकी प्रज्ञा सुस्थित !६८

तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वश:

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता !!

सब जीव की रात जो उसमें जागता संयमी

जब सारे जीव जागते उसे मानते रात मुनि !!६९

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी

यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुने !!

जैसे परिपूर्ण सागर में जल आता पर वह रहता थिर मर्यादित

वैसे ही सब भोग मिलते जिसे वह शांति पाता न कामाच्छादित !! ७०

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत् !

तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न कामकामी !!

सारी इच्छा छोड़कर पुरुष जो निस्पृह रहते

ममता अहंकार बिना वह शांति को पहुँचते !!७१

विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निस्पृहः

निर्ममो निरहंकार: से शान्तिमधिगच्छति !!

यह ब्राह्मी स्थिति पार्थ इसे पाकर मोह न आता

अन्तकाल भी इसमें स्थित ब्रह्मनिर्वाण पा जाता

एसा ब्राह्मी स्थिति पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति

स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति!७२

ॐ तत् सत्

अथवा अध्याय : तीन

अर्जुन बोले -

यदि कर्म से श्रेष्ठ बुद्धि हे जनार्दन आप बताते

फिर किसलिए केशव घोर कर्म में मुझे लगाते !१

मिश्रभाव के वचन से मेरी बुद्धि भ्रमित में पाऊँ

अतः एक निश्चय कहें इससे मैं हित कर पाऊँ !२

ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन

तत्किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव !!

व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे

तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम् !!

श्रीभगवान् बोले -

हे निष्पाप जग में दो निष्ठा मुझसे पूर्व कही

ज्ञानयोग से ज्ञानी की कर्मयोग से योगी की !!३

लोकेऽस्मिन्द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ

ज्ञानयोगेन साङ्ख्यानां कर्मयोगेन योगिनाथ !!

पुरुष कर्म आरंभ बिन नैष्कर्म्य नहीं चखता
एवं कर्मसन्यास मात्र से वो सिद्ध नहीं होता !!४

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते
न च सन्न्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति !!

बिना कर्म कोई कभी नहीं क्षणभर रह पाता
चूंकि परवश जीव से कर्म जातगुण करवाता !!५

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्
कार्यते ह्यदय: कर्म सर्व: प्रकृतिजैर्गुणै : !!

कर्मेन्द्रिय को रोककर जो मनसे करते चिंता
भोगों की वह मूढात्मा मिथ्याचारी कहलाता !!६

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य ये आस्ते मनसा स्मरन्
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचार: स उच्यते !!

किन्तु जो मन से अर्जुन इन्द्रियसंयम करता
निरासक्त वह श्रेष्ठ है इन्द्रिय से योग करता !!७

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन

कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते !!

निर्धारित तुम कर्म करो कर्म श्रेष्ठ अकर्म से

तेरा देहनिर्वाह भी सिद्ध न होगा अकर्म से !!८

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः

शरीरयात्रापि च ते न सिद्धेदकर्मणि !!

यज्ञभाव के कर्मों से भिन्न लोक यह कर्मबंधन

उसी भाव से कौन्तेय करो निरासक्त आचरण !९

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः

तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसंङ्गः समाचर !!

यज्ञभाव से प्रजा रचकर कहे शुरु में प्रजापति

इससे स्वसमृद्धि करो वो करे साधन आपूर्ति !१०

इससे देवपूजन करो वो करेंगे तेरी उन्नति

इस परस्पर भाव से परंश्रेय की होगी प्राप्ति !११

सहयज्ञाः प्रजा सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः

अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् !!

देवान भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः

परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ !!

यज्ञपूजित देवगण तुमको देंगे इष्ट भोग हर

इनसे परसेवा बिना भोगे वह निश्चय तस्कर !!१२

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः

तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्पेन एव सः !!

यज्ञशिष्ट आहारी सन्त काटते बंधन पापों का

पर जो स्वहित पकाते करे भोग वे पापों का !१३

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः

भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् !!

अन्न से सब प्राणी होते अन्न वर्षा से सम्भव

यज्ञ से वर्षा होती है एवं यज्ञ कर्म से सम्भव !१४

कर्म ब्रह्म उद्भूत मानो ब्रह्म अक्षर से नि:सृत

अतः सर्वगत परमेश्वर यज्ञ में सदा प्रतिष्ठित !१५

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भव:

यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञ: कर्मसमुद्भव: !!

कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम्

तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् !!

ऐसे चलते चक्र का जो नहीं चलता अनुसार

पापजीवी भोगरत पार्थ उसका जीना बेकार !१६

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह य:

अघायुरिन्द्रियारामो मोदी पार्थ स जीवति !!

किंतु जो नर आत्मरत एवं आत्मतृप्त रहता

तथा स्वयंसंतुष्ट का कुछ कर्तव्य नहीं रहता !१७

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवा:

आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते !

न कृति न शेष से उसका प्रयोजन विश्व में

एवं थोड़ा स्वार्थ नहीं उसका सारे जीव में !!१८

नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन

न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः !!

अतः निरासक्त रहकर सदा कर्तव्य ही करो

कर्मशील असक्त ही पुरुष पाता परमपद को !१९

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर

असक्त ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः !!

कर्म से ही परमसिद्धि प्राप्त की जनकान्य ने

लोकसंग्रह देखते हुए कर्म ही करना चाहिये !२०

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः

लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि !!

जो व्यवहार श्रेष्ठ करता उसे दूसरा करता है

वे जो प्रमाण दे जाते जग उसे अनुसरता है !२१

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः

से यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते !!

नहीं मेरा कर्तव्य कुछ पार्थ तीनों लोकों में

एवं प्राप्य अप्राप्य नहीं तोभी रहता कर्मों में !!२२

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किञ्चन

नानवाप्तमवाप्तव्यम् वर्त एव च कर्मणि !!

कारण यदि मैं कर्म में नहीं रहूँ सहचेतना

पार्थ मनुज मेरे पथ पर चलते हैं भेद बिना !!२३

शेष होवे सृष्टि यह यदि कर्म मैं नहीं करूँ

सङ्कर कर्ता और इस जीव का हन्ता बनूँ !!२४

यदि ह्येयं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः !!

उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम्

सङ्करस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः !!

कर्मासक्त अविद्वान करते भारत कर्म यथा

लोकसंग्रह करते हुए असक्त भी करे तथा !!२५

कर्मसङ्गी अज्ञानियों में न करे कोई मतांतर

सभी कर्मों के सहित कर्म करे युक्त विज्ञवर !२६

सक्ता: कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत

कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसङ्ग्रहम् !!

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसंङ्गिनाम्

जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्त: समाचरन् !!

प्रकृति के गुणों द्वारा कार्य किए जाते सभी

अहंकारवश मूढ मानव मैं कर्ता कहते यही !!२७

प्रकृते: क्रियमाणानि गुणै: कर्माणि सर्वश:

अहङ्कारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते !!

कर्म एवं गुण भागों को पार्थ परंतु तत्वज्ञानी

गुण ही गुण में वरत रहे यह मान फंसते नहीं !२८

तत्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयो:

गुणा गुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते !!

अंतर्गुणों से विमूढ गुणकर्मों से रहते सज्जित
उन अधज्ञ मन्दों को पूर्णज्ञ न करे विचलित !!२९

प्रकृतेर्गुणसम्मूढा: सज्जन्ते गुणकर्मसु
तानकृत्स्नविदो मन्दान् कृत्स्नविन्न विचालयेत् !

सारे कर्म मुझमें सौंपकर भग्वद्‌चेतना सहित
आशा ममता छोड़कर युद्ध करो संतापरहित !

मयि सर्वाणि कर्माणि सन्न्यस्याध्यात्मचेतसा
निराशीर्निममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वर: !!३०

श्रद्धावंत मनुज जो मेरा मत यह सदा धरते
दोषरहित वे भी कर्मबंधन का खंडन करते !!३१

ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवा:
श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तो मुच्यन्ते तेऽपि कर्मभि: !!

पर मेरे इस मत में दोष देख जो करे न सेवन
सभी ज्ञानों से विमूढ मानो वह नष्ट अचेतन !!३२

ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम्
सर्वज्ञानविमूढांस्तान्विद्धि नषटनचेतस: !!

निज प्रकृति अनुसार चेष्टा करत ज्ञानवान भी
प्राणी मिलते प्रकृति से क्या गति हठमान की !!३३
सदृशं चेष्टते स्वस्या: प्रकृतेर्ज्ञानवानपि
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रह: किं करिष्यति !!
हर इन्द्रिय के विषय रुप में रागद्वेष डेरा करे
इनके वश में न आवे चूंकि ये सत्पथ के रोड़े !३४
इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ
तयोर्न वशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ !!
निज धर्म उत्तम विगुण भी न परधर्म अनुष्ठान
निज धर्म में मरण श्रेष्ठ परधर्म बड़ा भयवान !३५
श्रेयान् स्वधर्मो विगुण: परधर्मात्स्वनुष्ठितात्
स्वधर्मे निधनं श्रेय: परधर्मो भयावह: !!
अर्जुन बोले -
फिर किससे प्रेरित हो यह पुरुष पाप करता
बिन इच्छा ही वार्ष्णेय बल से नियुक्त लगता !३६

अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरति पूरुषः

अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः !!

श्रीभगवान् बोले -

काम यह क्रोध यह रजोगुण का परिणाम
पापी बड़ा महाप्राशी यहाँ इसको वैरी मान !!३७
काम एष क्रोध एष श्रजोगुणसमुद्भवः
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् !!
जैसे ढ़का धूम से अग्नि एवं धूल से दर्पण
जैसे ढ़का भ्रूण जेर से वैसे ही इससे चेतन !!३८
धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च

यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् !!

ज्ञानियों का ज्ञान ढ़का नित्यवैरी काम से

एवं कठिन भरनेवाली हे कौन्तेय आग से !!३९

इन्द्रियाँ मन व बुद्धि इसके आवास कहलाते

इनके द्वारा ज्ञान ढ़ककर ये देही को भरमाते !४०

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते

एतैर्विमोह्यत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम् !!

इसलिए भरतश्रेष्ठ तुम इन्द्रियाँ पहले वशमें कर

ज्ञानविज्ञाननाशी इस पापी का निश्चय वध कर !४१

तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ

पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् !!

इन्द्रियाँ श्रेष्ठ कहलाती इन्द्रियों से मन श्रेष्ठ

मन से बुद्धि श्रेष्ठ है बुद्धि से पर काम श्रेष्ठ !!४२

ऐसे बुद्धि से परे मान स्वयं स्वयं को रोककर

कामरुप दुसाध्य शत्रु को महाबाहो नष्ट कर !४३

इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मन :

मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः !!

एवं बुद्धे परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना

जहि शत्रु महाबाहो कामरुपं दुरासदम् !!

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : चार

श्रीभगवान् बोले -

इस अव्यय योग को मैंने कहा विवस्वान से

विवस्वान ने मनु को मनु ने कहा इक्ष्वाकु से !१

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्

विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् !!

इस क्रम से योग यह राजर्षियों से पुष्ट हुआ

अधिकालवश परंतप इस लोक में नष्ट हुआ !२

एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदु:

स कालेनेह महता योगो नष्ट: परन्तप !!

मेरे भक्त सखा हो अत: वो ही योग पुरातन

मैंने तुझे कहा है जो रहस्य आज सच उत्तम !!३

स एवायं मया तेऽद्य योग: प्रोक्त: पुरातन:

भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम् !!

अर्जुन बोले -

जन्म आपका आज का सूर्य जन्मे आदि में

कैसे समझूँ योग यह कहा आपने आदि में !!४

अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वत:

कथमेतद्विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति !!

श्रीभगवान् बोले -

बीत चुके जन्म बहुत अर्जुन मेरे और तुम्हारे

मैं जानता किन्तु नहीं तुम उन्हें परन्तप सारे !५

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन

तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप !!

अज भी एवं अविनाशी और प्राणियों का ईश्वर

निज भाव अधीनकर स्वमाया से होता बाहर !!६

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामिश्वरोऽपि सन्

प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया !!

जब जब भारत धर्म का अधोपतन होने लगता

और अधर्म ऊपर उठता तब स्वयं को मैं रचता !७

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत

अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् !!

साधुजन का कुशलक्षेम एवं दुष्टों का निस्तार

धर्मस्थापन लक्ष्य से युग युग में लेता अवतार !!८

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्

धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे !!

ऐसे दिव्य जन्म कर्म जो मेरे मूल से जान लेता

देहमुक्त हो वह अर्जुन मुझे पाता जन्म न लेता !

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वत:

त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन !! ९

रागक्रोधभयमुक्त होकर मेरे मन मेरे आश्रित

ज्ञानतप से शुद्ध हो पाए मेरा रुप एकाधिक !१०

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिता:
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागता: !!

जो मुझे जैसे मिलते उनसे मेरा वैसे सत्कार
मेरे पथ से चलते हैं पार्थ मानव सभी प्रकार !११

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्या: पार्थ सर्वश: !!

कर्मसिद्धि के इच्छुक करे देवों की उपासना
चूंकि इस मनुलोक में कर्म फलता देर बिना !!१२

काङ्क्षन्त: कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवता
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा !!

चार वर्ण मुझसे सृजित गुण कर्म विभाग से
उसके कर्ता को भी अकर्ता अव्यय जान ले !!१३

कर्म मुझे नहीं लेपता न मैं कर्मफल चाहता
ऐसे जो मुझे जानता उसे कर्म नहीं बांधता !१४

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः

तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम् !!

यह जानकर मुमुक्षुओं ने कर्म किए हैं पहले भी

अतः सदा का पूर्वज कर्म तुम भी करो वैसे ही !

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैरपि मुमुक्षुभिः

कुरु कर्मैव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम् !!१५

क्या कर्म अकर्म है यहाँ कवि भी मोहित होते

तुम्हें कर्म कहूँगा वह जिससे नष्ट अहित होते !१६

किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः

तत्ते कर्म प्रवक्ष्यामि यञ्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् !

कर्म तत्व है जानने का एवं तत्व विकर्म भी

तथा तत्व अकर्म का चूंकि गूढ गति कर्म की !१७

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः

अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः !!

जो कर्म में अकर्म देखता एवं कर्म अकर्म में

वह योगी धीमान सकल कर्मकर्ता मनुवर्ग में !१८

कर्मण्यकर्म य: पश्येदकर्मणि च कर्म य:

स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्त: कृत्सनकर्मकृत् !!

जिसके सारे शुभारंभ इच्छा व संकल्प रहित

ज्ञानताप में तपे कर्म उन्हें ज्ञानी कहते पंडित !१९

यस्य सर्वे समारम्भा: कामसङ्कल्पवर्जिता:

ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहु: पण्डितं बुधा: !!

कर्मफलासक्ति छोड़ सदातृप्त निराश्रय रहता

कर्मों में प्रवृत्त होकर भी वो कुछ नहीं करता !२०

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रय:

कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित्करोति स: !!

आसरिक्त आधीनमन त्यागी जो परिग्रह का

मात्र देह कर्म करके पाप कभी न वह पाता !!२१

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रह:

शारीरं केवलं कर्म कुर्वनाप्नोति किल्बिषम् !!

स्वत: प्राप्त से संतुष्ट द्वन्द्वरहित मत्सर नहीं

तथा समान फलाफल में कर्म भी बंधन नहीं !२२

यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सर:

सम: सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते !!

मोहमुक्त सन्यासी का ज्ञान स्वरूप में होता

यज्ञाचरण वाले का कर्म समग्र विलीन होता !२३

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थिचेतस:

यज्ञायाचरत: कर्म समग्रं प्रविलीयते !!

ब्रह्म अर्पण ब्रह्म हवि ब्रह्म आग में होता ब्रह्म

कर्म की समाधि ब्रह्म उसे प्राप्त गन्तव्य ब्रह्म !!

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम्

ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना !!२४

कुछ योगी यज्ञ से ही देव उपासना करते हैं

कई यज्ञ ब्रह्माग्नि में यज्ञ से आहुति करते हैं !२५

दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते

ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति !!

कोई संयमताप में कर्णादि इन्द्रिय हवन करते

कोई इन्द्रिय आग में मंत्रतत्व का हवन करते !२६

श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति

शब्दादीन्विषयानन्य इन्द्रियाग्निषु जुह्वति !!

कोई सभी इन्द्रियकला एवं प्राण की कला को

हवन करते ज्ञानदीप्त स्वसंयम योगज्वाला को !

सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे

आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते !!२७

अन्य करते यज्ञ द्रव्य के तप योग स्वाध्याय के

ज्ञानयज्ञ भी करते यति तीक्ष्ण व्रत अध्याय के !!

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे

स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः !!२८

प्राणायामकुशल करते हवन प्राण अपान में

अन्य प्राणापान रोककर अपान को प्राण में !२९

दूसरे आहारसंयमी प्राण प्राण में हवन करते

ये सब यज्ञविद् यज्ञ से पापों का हनन करते !३०

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे

प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः !!

अपरे नियताहाराः प्राणान्प्राणेषु जुह्वति

सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः !!

यज्ञशेष अमृतभोगी ब्रह्म सनातन को पाता

कुरुवर न इहलोक यज्ञबिन तो कहाँ से दूसरा !३१

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम्

नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम !!

ऐसे बहुविध यज्ञों को गाती विशद वेद उक्ति

वे सभी कर्मज मानो जिसे ज्ञान मिलेगी मुक्ति !३२

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे

कर्मजान्विद्धि तान्सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे !!

द्रव्य यज्ञ से परंतप ज्ञानयज्ञ बड़ा कहलाता

ज्ञान क्षेत्र में हे पार्थ कर्म पूरा लीन हो जाता !३३

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञ: परन्तप

सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते !!

उसे जानो परिप्रश्नों से देहनमन से सेवा से

तत्वदर्शी ज्ञानीजन वह ज्ञान उपदेश करेंगे !!३४

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया

उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिन: !!

उसे जानकर हे पाण्डव मोह फिर न आएगा

इससे अंदर सबजीवों को फिर मुझमें देखेगा !३५

यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पाण्डव

येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि !!

सगर पापियों में भी अगर महापापी होगा

ज्ञाननाव से ही सभी पापनिधि तर जाएगा !!३६

अपि चेदसि पापेभ्य: सर्वेभ्यः पापकृत्तम:

सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं सन्तरिष्यसि !!

अर्जुन जैसे जलती आग इंधन को जला देती

ज्ञान अग्नि सारे कर्मों को वैसे ही जला देती !३७

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन

ज्ञानाग्नि: सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा !!

ज्ञान सदृश इस जग में पावन नहीं नि:संदेह

उसे आप में योगसिद्ध स्वयं पाता समय से !!३८

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते

तत्स्वयं योगसंसिद्ध: कालेनात्मनि विन्दति !!

श्रद्धावान इन्द्रिययति तत्पर ज्ञान पा जाता

ज्ञान पाकर शीघ्र ही परम् शांति को जाता !!३९

श्रद्धावाल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः

ज्ञानं लब्ध्वा परां शांतिमचिरेणाधिगच्छति !!

ज्ञानहीन व श्रद्धाहीन शंकितमन मिट जाता

शंकालु न लोक यह न परलोक न सुख पाता ४०

अज्ञश्चाश्रद्धानश्च संशयात्मा विनश्यति

नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः !!

योग द्वारा कर्मसंयासी ज्ञान द्वारा छिन्न संशय

आत्मवान को बंधन कर्म नहीं देते धनञ्जय !४१

योगसन्न्यस्तकर्माणं ज्ञानसञ्छिन्नसंशयम्

आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय !!

अतः छेदकर संशय को ज्ञानरुपी अस्त्र लेकर

अज्ञानज मनस्थ जो उठो पार्थ योगस्थ होकर !४२

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : पाँच

अर्जुन बोले -

कर्मों से सन्यास की पुनः कृष्ण योग प्रशंसा

मुझे कहें एक निश्चयकर इनमें जो श्रेय का !!१

सन्न्यासं कर्मणां कृष्ण पुनर्योगं च शंससि !

यच्छ्रेयं एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम् !!

श्रीभगवान् बोले -

कर्मयोग एवं सन्यास दोनों ही कल्याणकारी !

किन्तु कर्मसन्यास से कर्मयोग अधिक भारी !!२

सन्न्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयस्करावुभौ !

तयोस्तु कर्मसन्न्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते !!

नितसन्यासी ज्ञेय वह जिसे न द्वेष न कामना !

बंधमुक्त होते सहज महाबाहु जो द्वन्द्व बिना !!३

ज्ञेयः नित्यसन्न्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति !

निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते !!

पृथक बताते ज्ञान कर्म बच्चा पर पण्डित नहीं

एक में भी ठीक से स्थित दोनों पाते फल वही !४

साङ्ख्ययोगौ पृथग्बाला: प्रवदन्ति न पण्डिता: !

एकमप्यास्थित: सम्यगुभयोर्विन्दते फलम् !!

जो पद साङ्ख्य से मिले योग से वही मिलता

ज्ञान एवं योग एक सा जो देखता वही देखता !५

यत्साङ्ख्यै: प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते !

एकं साङ्ख्यं च योगं च य: पश्यति स पश्यति !

महाबाहो सन्यासफल योग बिना दु:खदायी

योगयुक्त मुनि ब्रह्म को प्राप्त करता शीघ्र ही !!६

सन्न्यासस्तु महाबाहो दु:खमाप्तुमयोगत: !

योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म नचिरेणाधिगच्छति !!

योगयुक्त शुद्ध प्राणी मन इन्द्रिय जीत लेता

सारे जीव स्वयं जैसा कर्म भी न उसे लेपता !!७

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः !
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते !!
मैं नहीं कुछ भी करता योगी तत्वज्ञ यह माने
देखते सुनते छूते सूंघते खाते चलते निद्रा में !!८
कहते त्यागते सांस लेते नैन मूंदते ताकते भी
सभी इन्द्रियाँ स्वविषयों में है करे धारण यही !९
नैव किञ्चित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्ववित्
पश्यञ्श्रृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपञ्श्वसन्!
प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि !
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन् !!
कर्मों को ईश्वर समर्पित सङ्ग छोड़कर करता जो
पद्मपत्र पर वारि जैसे नहीं पाप से भीजता वो !
ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा !!१०
तन से मन से बुद्धि से एवं इन्द्रिय मात्र से भी
संङ्ग छोड़ योगीजन कर्म से करते स्वयंशुद्धि !११

कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिन्द्रियैरपि !
योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्त्वात्मशुद्धये !!
योगी कर्मफल छोड़कर नैष्ठिक शांति पा जाता
अयोगी आसक्त कामवश फल में बांधा जाता !१२
युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शांतिमाप्नोति नैष्ठिकीम्
अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते !!
सब कर्मों को छोड़कर यति मन से सुखी रहता
नौ द्वार के गाँव में देही न करवाता न ही करता !
सर्वकर्माणि मनसा सन्न्यस्यास्ते सुखं वशी !
नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन् !!१३
जीवों के न कर्तापन न कर्मों को प्रभु रचता
नहीं मिलाते कर्मफल किंतु स्वभाव ही रहता !१४
न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजते प्रभुः !
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते !!

नहीं लेते पाप ईश्वर न ही किसी के पुण्य को
ज्ञान ढ़का अज्ञान से उससे मोहते जीव को !!१५

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः !
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यति जन्तवः !!

किंतु जो मारे ज्ञान से अपने उस अज्ञान को
उनका ज्ञान वह सूर्यवत् चमकाता महान को !१६

ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः !
तेषामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम् !!

तत् बुद्धि तत् आत्मा तत् निष्ठा तत् परायण
ज्ञान द्वारा पापनिर्मल पार करते आवागमन !१७

तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः !
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः !!

विद्याविनय के धनिकों में गौ ब्राह्मण श्वान में
पण्डित दृष्टि एक सी हस्ति एवं चाण्डाल में !!१८

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि !
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता: समदर्शिन: !!
जो मन से साम्यस्थित इसी देह में सृष्टिजित
चूंकि ब्रह्म निर्दोष सम इसलिए वे ब्रह्मस्थित !१९
इहैव तैर्जित: सर्गो येषां साम्ये स्थितं मन:!
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते स्थिता: !!
प्रिय ले हर्षित नहीं अप्रिय लेकर नहीं दुखित
स्थिरबुद्धि मूढ नहीं ब्रह्मविद् वह ब्रह्मस्थित !२०
न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम् !
स्थिरबुद्धिरसम्मूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थित: !!
बाह्य सुखों से दूर प्राणी अंत:सुख पा लेता है
ब्रह्मयोग में लीन मन अक्षय सुख चख लेता है !
बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत्सुखम्
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते !!२१

जो स्पर्शजन्य भोग हैं वे ही दुखों की जननी

अंतादि वाले सुखों में कौन्तेय न रमते ज्ञानी !२२

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुखयोनय एव ते !

आद्यन्तवन्त: कौन्तेय न तेषु रमते बुध: !!

इस तन के जाने से पहले जो सहने में सक्षम

कामक्रोधजन्य वेग को वो योगी सुखी मानव !२३

शक्नोतीहैव य: सोढुं प्राक्शरीरविमोक्षणात् !

कामक्रोधोद्भवं वेगं स युक्त: स सुखी नर: !!

अंत:सुख अंत:रमण जो बस अंत:प्रभा वाला

ब्रह्मरुपित योगी वह ब्रह्मनिर्वाण प्राप्त करता !२४

योऽन्त:सुखोऽन्तरारामस्तथान्तर्ज्योतिरेव य: !

स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति !!

पाते हैं निर्वाणब्रह्म ऋषिगण जो निष्पाप होते

द्वन्द्वरहित शासित मन सर्वजीव हितार्थ रमते !

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषय: क्षीणकल्मषा: !
छिन्नद्वैधा यतात्मान: सर्वभूतहिते रता: !!२५
काम क्रोध से अलग चित्त वश में जो रखते
आत्मदर्शियों के निर्वाणब्रह्म सब ओर रहते !!२६
कामक्रोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसाम् !
अभितो ब्रह्मनिर्वाणं वर्तते विदितात्मनाम् !!
बाहरी वस्तु बाहर करके भौं बीच दृष्टि रखके
नासिका में विचरते प्राणापान को सम करके !२७
इन्द्रिय मन धी जीतकर मुनि मोक्षपरायण जो
काम क्रोध भय रहित सदा ही बिन बंधन वो !२८
स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरे भ्रुवो: !
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ !!
यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायण: !
विगतेच्छाभयक्रोधो य: सदा मुक्त एव स: !!

भोक्ता यज्ञों तपों का सकल लोक का महेश्वर

सब जीवों का सुहृद शांति पाता मुझे जानकर !

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम् !

सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शांतिमृच्छति !!२९

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : छः

श्रीभगवान् बोले -

कर्मफल आश्रय बिना जो करते कर्तव्य काम !

वह सन्यासी एवं योगी न निरग्नि व न उपराम !१

अनाश्रित: कर्मफलं कार्यं कर्म करोति य: !

स सन्न्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रिय: !!

जिसे यह सन्यास कहते उसे पार्थ मानो योग !

बिन संकल्पत्याग के न योगी का कुछ संयोग !२

यं सन्न्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव !

न ह्यसन्न्यस्तसङ्कल्पो योगी भवति कश्चन !!

योग के इच्छुक मुनि के कर्म कहलाता कारण !

योगारूढ होने पर शांति उसी का उक्त कारण !३

आरुरुक्षोर्मुनेर्योग कर्म कारणमुच्यते !

योगारूढस्य तस्यैव शम: कारणमुच्यते !!

जिस समय न भोगों से न कर्मों से लग पाता !
सर्वसंकल्पसन्यासी योगारूढ तब कहलाता !!४
यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्जते !
सर्वसङ्कल्पसन्न्यासी योगारूढस्तदोच्यते !!
स्वयं करे उद्धार अपना नहीं करे पतन अपना !
चूंकि आप ही बंधु अपना आप ही वैरी अपना !!५
उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् !
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः !!
जो आपसे आप जीता आप आपका है बंधु !
अनात्मा तो वैर में आप ही वरतता जैसे शत्रु !!६
बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः !
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् !!
आत्मजयी परिशान्त के परमात्मा संज्ञान में !
शीतोष्ण सुख दुःख तथा मान व अपमान में !!७

जितात्मानः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः !

शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयो : !!

ज्ञान-विज्ञान से तृप्तमन स्थिरचित्त इन्द्रियजयी!

ढेला पत्थर स्वर्ण सम योगस्थ कहाते यह योगी!!८

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः !

युक्त इति उच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः !!

सुहृद बन्धु मित्र अरि संत उदासीन मध्यस्थ !

हित एवं पाप में भी समबुद्धि होता विशिष्ट !!९

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु !

साधुष्वपिच पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते !!

योगी यति स्थित सतत् मन असङ्ग जोड़ ले !

तन-मन आधीनकर आस परिग्रह छोड़ के !!१०

योगी युञ्जीत सततात्मानं रहसि स्थितः !

एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः !!

शुद्ध क्षेत्र में स्थाई आसन अपना स्थापन कर !
अति ऊंच न अति नीच कुशाजिन वस्त्र देकर !!११

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः !
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् !!

एकाग्र होकर वहाँ मन इन्द्रिय अक्रिय करके !
स्वशुद्धि से योग का आसन बैठ अभ्यास करे !!१२

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः !
उपविश्यासने युञ्जाद्योगमात्मविशुद्धये !!

धर मस्तक ग्रीव को एक सीध में अचल करे !
निज नासाग्र बैठ निहारे दिशा दर्शन न करे !!१३

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः !
सम्प्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् !!

प्रशांत आत्मा भयरहित ब्रह्मचारी व्रतस्थित !
संयत मन चित्त मुझमें मेरे सहारे रहे स्थित !!१४

प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः !
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः !!
नियतमन योगी सदा ऐसे आप को जोड़ता !
मुझस्थित निर्वाणरूप परंशान्ति निचोड़ता !!१५
युञ्जन्नैवं सदात्मानं योगी नियतमानसः !
शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति !!
अतिभोजन का योग नहीं एवं न पूरे भूखे का !
न अति निद्रासेवी का एवं न अर्जुन जगते का !!१६
नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः !
न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन !!
संयमित भोजन आचार कर्मों में चेष्टा सम्यक् !
सही नींद जागृति का योग होता दुःखनाशक !!१७
युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु !
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा !!

चित्त वशीकृत स्व में ही जब व्यस्थित हो जाता।

निःस्पृह सब कामना से तब योगी वो कहलाता !!

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते !

निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा !!१८

दीपशिखा निर्वात में अकम्पित जैसी रहती।

स्थिरचित्त योगाचारी की कथित उपमा वही !!१९

यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता !

योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः !!

योगसेवन काल में रुद्धचित्त जब हो उपराम।

स्वयं देखता स्वयं को स्वयं में होता तुष्टकाम!!२०

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया !

यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति !!

चरंसुख इन्द्रियपरे जो बुद्धिग्राह्य जब ज्ञात हो।

एवं यहाँ स्थित यह तत्वतः नहीं विस्थाप्य हो!!२१

सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम् !
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः !!
जिसे पाकर अन्य लाभ अधिमान न लेता फिर !
जिसमें स्थित बड़े दुख से भी न होता अस्थिर !!२२
यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः !
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते !!
दुःखयोग के वियोग को योग नाम दिया जाता !
वह योग साध्य निश्चय ही नहीं ऊबते चित्त का !!
तं विद्याद्दुःखसंयोगवियोगं योगसञ्ज्ञितम् !
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा !!२३
संकल्पभूत सब इच्छाओं को अशेष मिटाकर !
मन से इन्द्रियग्राम को सभी ओर से हटाकर !२४
सङ्कल्पप्रभवान्कामांस्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः !
मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः !!

धीरे धीरे बुद्धि से धीरज धर उपराम हो जाये !

आत्मस्थ मन रखकर कुछ भी न चिंतन लाये !!२५

शनैः शनैरुपरमेद्बुद्ध्या धृतिगृहीतया !

आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किञ्चिदपि चिन्तयेत्

जहाँ जहाँ चंचल एवं अस्थिर मन जाता है !

वहाँ वहाँ से दूर कर स्वयं में ही उसे लगाये !!२६

यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् !

ततो ततो नियम्यैतदात्मनयेव वशं नयेत् !!

शांतचित्त ब्रह्मरुप योगी शांतरज व निष्पाप

वह अवश्य ले पाता सर्वोत्तम सुख का लाभ !२७

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् !

उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् !!

इस प्रकार स्वयं को लगा क्षीणपाप योगी सदा

ब्रह्मस्पर्श अत्यन्त सुख को सुखपूर्वक भोगता !!

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः !

सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते !!२८

सब जीवों में स्वयं स्थित एवं सबको आप में!

योगयुक्त साधक देखता हर स्थान समरुप में!!२९

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि !

ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः !!

जो मुझे सर्वत्र देखता एवं मुझमें सब देखता!

मैं न उसे अदृश्य एवं वह न मुझे अदृश्य होता!!३०

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति!

तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति !!

सर्वजीववासी मुझे एक श्रद्धा से जो भजता!

सबमें रहता हुआ भी वह योगी मुझमें रहता !!३१

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः !

सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते !!

स्वउपमा से हे अर्जुन जो देखे सर्वत्र समान !

सुख एवं दु:ख को मेरा मत वह योगी महान !३२

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन !

सुखं वा यदि वा दु:खं स योगी परमो मतः !!

अर्जुन बोले -

समता से जो मधुसूदन आपने यह योग कहा !

इसकी स्थिर स्थिति चंचलतावश नहीं देखता !!३३

योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन !

एतस्याहं न पश्यामि चंचलत्वात्स्थितिं स्थिराम् !

चूंकि कृष्ण चंचल मन मथनीय दृढ़ बलवान !

उसका निग्रह मैं मानता सुदुष्कर वायु समान !!३४

चञ्चलं हि मन: कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम् !

तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् !!

श्रीभगवान् बोले -

नि:संदेह महाबाहु चंचल मन का दुष्कर निग्रह!

पर अभ्यास वैराग्य से पार्थ पकड़ा जाता यह!!३५

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्!

अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येन च गृह्यते !!

असंयत मन से कठिन योग प्राप्ति यह मेरा मत

किंतु वशीकृत चित्त से साध्य यतन से विधिवत् !

असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मतिः !

वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः !!३६

अर्जुन बोले -

यत्नहीन श्रद्धावान साधक योग से विचलित है!

योगसिद्धि न पाकर कृष्ण गति क्या विहित है !

अयति: श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः !

अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति !!३७

दो ओर से भ्रष्ट क्या छिन्न मेघ सा खप जाता !

बिना ठौर महाबाहु ब्रह्मपथ में मूढ रह जाता !!३८

कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिव नश्यति !

अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि !!

मेरे इस संशय को कृष्ण भेदने योग्य पूरा !

आप सिवा भ्रमभेदी निश्चय न होगा दूसरा !!३९

एतन्मे संशयं कृष्ण छेत्तुमर्हस्यशेषतः !

त्वदन्यः संशयस्यास्य छेत्ता न ह्युपपद्यते !!

श्रीभगवान् बोले -

पार्थ यहाँ न वहाँ ही उसका नाश हो पाता !

चूंकि तात सत्कर्म कर कोई न दुर्गति जाता !!४०

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते !

न हि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति !!

पाकर पुण्यलोकों को दीर्घ काल तक रहता !

शुद्ध एवं सम्पन्न कुल में योगभ्रष्ट जन्म लेता !!४१

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः !

शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते !!

अथवा ज्ञानी योगियों के कुल में ही आता !

ऐसा नि:संदेह जग में जन्म दुर्लभतर होता !!४२

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम् !

एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम् !!

पूर्वदेह का मनोयोग उसे वहाँ भी मिल जाता !

हे कुरुनन्दन दुबारा समसिद्धि में लग जाता !!४३

तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम् !

यतते च ततो भूय:संसिद्धौ कुरुनन्दन !!

उसी पूर्वाभ्यास से विवश भी वह खिंच जाता !

चूंकि योग जिज्ञासु भी वेदमंत्र से बाहर जाता !!४४

पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः !

जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते !!

किंतु साधना से साधक पापविशुद्ध योगी जो।

कई जन्म से सिद्ध वह तब पाता परंगति को !!४५

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्विषः !

अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम् !!

तपस्वियों से श्रेष्ठ योगी ज्ञानियों से भी मत यह।

एवं कर्मियों से श्रेष्ठ योगी अर्जुन योगी हो अतः !

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः !

कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन !!४६

श्रद्धावान लीन जो भजता मुझे अन्तर्मन से

सभी योगियों में भी वह सर्वोत्तम मेरे मत से !!४७

योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना !

श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः !!

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : सात

श्रीभगवान् बोले -

मुझमें लीन मेरे आश्रित पार्थ योग करता हुआ!

सुनो वह संशय बिना मुझे समग्र जैसे जानेगा !!१

मय्यासक्तमना: पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रय: !

असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु !!

मैं तुझे विज्ञान सहित यह ज्ञान पूरा कहूँगा !

जिसे जान यहाँ फिर और न ज्ञातव्य रहेगा !! २

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषत: !

यञ्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते !!

सहस मनुष्यों में कोई सिद्धि हेतु से साधता है!

यति सिद्धों में कोई ही मुझे तत्वत: जानता है !!३

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चितद्यतति सिद्धये !

यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वत: !!

भूमि जल आग वायु नभ एवं मन तथा बुद्धि।

अहंकार इतने ये मेरी आठ रुप भिन्न प्रकृति !!४

यह मेरी अपरा प्रकृति इससे भिन्न जानो परा।

जीवरुप हे महाबाहु जिससे यह संसार धरा !!५

भूमिरापोऽनलो वायु:खं मनो बुद्धिरेव च !

अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृति अष्टधा !!

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे परामम् !

जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् !!

यह स्रोत है सब जीवों का इतना संज्ञान करो।

मैं सकल संसार का प्रलय और उत्थान सुनो !!६

एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय !

अहं कृत्स्नस्य जगत: प्रभव: प्रलयस्तथा !!

मेरे सिवा हे धनञ्जय थोड़ा सा भी अन्य नहीं !

मुझमें ये सारे समाये धागा में मणियों जैसे ही !!७

मत्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनञ्जय !

मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव !!

कौन्तेय जल का रस मैं शशि सूर्य की हूँ प्रभा !

प्रणव सारे वेदों में नभ में शब्द पौरुष नर का !!८

रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः !

प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु !!

सुखद गन्ध हूँ वसुधा का एवं तेज हूँ अगन में !

सभी प्राणियों में जीवन एवं तप तपसीजन में !!९

पुण्यो गन्धः पृथिव्यांच तेजश्चास्मि विभावसौ !

जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु !!

सब जीवों का बीज सनातन हे पार्थ जानो मुझे !

बुद्धिमानों में बुद्धि हूँ मैं तेज हूँ तेजस्वियों में !!१०

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम् !

बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् !!

एवं बल मैं बलवंतों में काम राग से पूर्ण वर्जित!

जीवों में धर्मानुकूल भरतश्रेष्ठ हूँ काम अर्जित!!११

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम् !

धर्माविरुद्धो भूतेषु कामऽस्मि भरतर्षभ !!

और भी भाव सात्त्विक राजस व तामस जितने!

मुझसे ही ये ऐसा मानो पर न मैं उनमें वे मुझमें !

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये !

मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि !१२

इन तीन गुणी भावों से मोहित यह सारा जगत!

नहीं जानता मुझ अव्यय को इन गुणों से विगत!

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्!

मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् !!१३

दैवी गुणमानी निश्चय ही यह मेरी माया दुष्पार!

जो मेरी ही शरण लेते वे करते यह माया पार !!

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया !

मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते !!१४

मेरी ओर नहीं आते दुष्कर्मीजन मूढ नराधम!

मायाहृत बुद्धिवाले असुरता जिनका आश्रम !!१५

न मां दुष्कृतिनो मूढा: प्रपद्यन्ते नराधमा: !

माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिता: !!

चार वर्ग के लोग मुझे भजते सत्कर्मी अर्जुन!

लोभी आर्त्त जिज्ञासु तथा ज्ञानी हे भरतर्षभ !!१६

चतुर्विधा भजन्ते मां जना: सुकृतिनोऽर्जुन !

आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ !!

ज्ञानी नित्ययोगी उनमें एकभक्ति वाला अलीक!

चूंकि ज्ञानियों का प्रिय मैं एवं वह मेरा अधिक !

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते !

प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रिय: !!१७

ये सभी उदार पर ज्ञानी मेरा ही रुप मत मेरा !

सद्स्थित युक्त वह निश्चय पथ न श्रेष्ठ दूसरा !!१८

उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् !

आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम् !!

कई जन्मों के अन्त में ज्ञानी लेता मेरा आश्रय !

वासुदेव ही सकल बस ऐसा महात्मा सुदुर्लभ !!१९

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते !

वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभ !!

जिन जिन इच्छा से विवश पूजते उन देवों को !

निज निश्चित प्रकृति से धरते उन उन पंथों को !!

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः !

तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया !!२०

जिस जिस देव को सश्रद्धा जो जो भक्त पूजना चाहता !

उसी श्रद्धा को मैं उस उस देव में ही अचल करता !!२१

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति !

तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम् !!

उस श्रद्धा से भरा वह उस देव का आराधता !

एवं फलता काम उससे पर मैं ही वह बनता !२२

स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते !

लभते च ततः कामान्मयैव विहितान्हि तान् !!

किंतु फल वह अन्तवान होते उन अल्पज्ञों के !

देवयाची देवों को पाते मेरे भक्त मुझे ही पाते !!२३

अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम् !

देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि !!

मुझ अव्यक्त को बुद्धिहीन मानते हैं देहधारी !

नहीं जानते रुप मेरा सर्वश्रेष्ठ परम अविनाशी !!२४

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः !

परं भावमजानन्तो ममव्ययमनुत्तमम् !!

योगमाया से आवृत दिखता नहीं मैं सबको।

मूढ जीव न जानता यह अज अक्षर मुझको !!२५

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः !

मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम् !!

कुल अतीत व वर्तमान हे अर्जुन मुझको पता।

एवं भावी जीवों के किंतु मुझे न कोई जानता।!२६

वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन !

भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन !!

इच्छा द्वेष से जन्मे द्वन्द्व मोहवश हे भारत !

सभी जीव मोहित होते सृष्टिकाल में परंतप !!२७

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत !

सर्वभूतानि सम्मोहं सर्गे यान्ति परन्तप !!

पर जिन पुण्यकर्मी जनों के पाप नष्ट होते !

द्वन्द्व मोह से विमुक्त वे दृढ़व्रती मुझे भजते !!२८

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मनाम् !

ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढ़व्रता: !!

जरा मरण से मुक्ति पाने जो साधते मेरे सहारे !

वे जानते वह ब्रह्म कुल अध्यात्म व कर्म सारे !!२९

जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये !

ते ब्रह्म तद्विदु: कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम् !!

अधिभूत अधिदैव व साधियज्ञ जो मुझे जानते !

विदाकाल में भी वे ईश्वरमानस मुझको जानते !!

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदु: !

प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतस: !!३०

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : आठ

अर्जुन बोले -

क्या वो ब्रह्म क्या अध्यात्म नरश्रेष्ठ कर्म क्या।

अधिभूत उक्त क्या एवं अधिदैव कहाता क्या !!१

यहाँ कौन अधियज्ञ कैसे इस तन में मधुसूदन।

एवं अंतसमय कैसे आप ज्ञेय द्वारा संयतमन !!२

किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम !

अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते !!

अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन्मधुसूदन !

प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः !!

श्रीभगवान् बोले -

परमाक्षर ब्रह्म है आत्मभाव अध्यात्म कहाता !

जीवजन्म का हेतुविसर्जन कर्म की संज्ञा पाता !!३

अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते !

भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसञ्ज्ञितः !!

क्षर रुप अधिभूत है और पुरुष अधिदैव।

मैं ही मात्र अधियज्ञ हूँ देह में देहधरश्रेष्ठ !! ४

अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम् !

अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर !!

मेरा ध्यान करता हुआ देह त्यागकर अंत में !

जो जाता वो मेरा रुप पाता नहीं संदेह इसमें !!५

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् !

यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः !!

जिस जिस भावस्मृति से अंतमें तन त्यागता !

उससे भावित सदा कौन्तेय उसे उसे ही पाता !!६

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् !

तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः !!

अतः हर काल में मेरा ध्यान कर और युद्ध भी।

मुझे अर्पित बुद्धिमानस पाओगे निशंक मुझे ही।!७

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च !

मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् !!

अभ्यासयोग से जुड़कर अनन्यगामी मन से !

पार्थ ध्यान करता हुआ मिले परंदिव्य नर से !!८

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना !

परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन् !!

ध्यावे जो अणु से सूक्ष्म शासक कवि पुराण का !

सबका धाता अचिंत्यरुप तमातिपरे रविवर्ण का !!

कविं पुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः !

सर्वस्य धातारमचिन्त्यरुपमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् !! ९

गमनकालमें अविचल मनसे भक्तिसे व योगबलसे !

भौंबीच प्राण साधकर वो मिलता उस परंदैव नरसे !!१०

प्रयाणकाले मनसाचलेन भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव !

भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्यसम्यक् स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम् !!

जो अक्षर वेदज्ञ बखाने यति विरागी जिसे पाते !

जिस कामसे ब्रह्मचर्य रखे वो पद तुझे कहूँ सारे!

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति विशन्ति यद्यतयो वीतरागा: !

यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं सङ्ग्रहेण प्रवक्ष्ये !! ११

सारे द्वार बंदकर एवं मन रोककर हृदय में !

स्वप्राण मस्तकमें रखकर बैठे योगनिश्चय में !!१२

इस एकाक्षर ब्रह्म ॐ को मेरे ध्यान संग जपता !

जो जाता तन त्यागकर परमगति को वह पाता !

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च !

मूर्ध्न्याधायात्मन: प्राणमास्थितो योगधारणाम् !!

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् !

य: प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् !!

एकचित्त मनुज जो ध्याता नित्य निरंतर मुझे !

मैं सुलभ हूँ पार्थ उस सदालीन योगी के लिए !!१४

अनन्यचेता: सततं यो मां स्मरति नित्यश: !

तस्याहं सुलभ: पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिन: !!

दु:खनिवास अस्थाई जन्म दूसरा नहीं लेते !

मुझे पाकर महात्माजन परमसिद्धि पा गये !!१५

मामुपेत्य पुनर्जन्म दु:खालयमशाश्वतम् !

नाप्नुवन्ति महात्मान: संसिद्धिं परमां गता: !!

ब्रह्मलोक पर्यन्त अर्जुन सारे लोक घूमनेवाले !

पर मुझे पाकर कौन्तेय पुनर्जन्म न रहनेवाले !!१६

आब्रह्मभुवनाल्लोका: पुनरावर्तिनोऽर्जुन !

मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते !!

एक सहस्त्र युगचक्रका ब्रह्मदिन जो जानते !

सहस्त्रयुगी रातको वे अहोरात्रविद् कहलाते !!१७

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदु: !

रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जना: !!

बिनदेह से देहधारी सभी होते दिन आने से !

लीन होते उस अदेहनाम के ही रात होने में !!१८

अव्यक्ताद्व्यक्तय: सर्वा: प्रभवन्त्यहरागमे !

रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसञ्ज्ञके !!

वही जीवदल रात में हो होकर समा जाता !

दिन आने पर पुनः पार्थ पराधीन आ जाता !१९

भूतग्राम: स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते !

रात्र्यागमेऽवश: पार्थ प्रभवत्यहरागमे !!

किंतु अन्य जो अव्यक्त से परंरुप सत्य अव्यक्त !

वो सब जीवों के नष्ट होने पर भी नहीं होता नष्ट !!

परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्झ: !

य: स सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति !!

अव्यक्त अक्षर उक्त यही वो कथित परंगति !

जिसे पाकर नहीं लौटते परमधाम मेरा वही !२१

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहु: परमां गतिम् !

यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम !!

पार्थ वह परमपुरुष तो एक भक्ति से ही प्राप्य !

जीव इसके अन्तर्गत इससे ये पूरा जग व्याप्त !!

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्या !

यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम् !!२२

देहगामी योगीजन आवृत्ति पाते जिस काल में !

एवं अनावृत्ति भरतश्रेष्ठ बतलाता वह काल मैं !!२३

यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः !

प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ !!

अग्नि प्रभा शुक्ल दिन छः मासका उत्तरायण !

ब्रह्म से मिल जाते तब जानेवाले ब्रह्मवेत्तागण !!२४

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम् !

तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः !!

धुआँ रात्रि व कृष्णपद छः मासका दक्षिणायन !

योगी वहाँ चन्द्रप्रभा से प्राप्त करते पुनरावर्तन !!

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम् !
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते !!२५
शुक्ल एवं कृष्ण गति यही जग में मान्य सदा !
एक से आती अनावृत्ति दूसरे से फिर लौटता !!२६
शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते !
एकया यात्यनावृत्तिमन्यययावर्तते पुनः !!
इन पथोंके ज्ञानी कोई योगी पार्थ न भ्रम ढोता !
इसलिए हर समय में हे अर्जुन योगवान हो जा !!
नैते सृती पार्थ जानन्योगी मुह्यति कश्चन !
तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन !!२७
वेद यज्ञ तप दानमें जिन सत्फलों के निर्देश !
योगी ये सब जान लांघते एवं जाते मूल देश !!

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : नौ

श्रीभगवान् बोले -

यह गूढ़तम ज्ञान मैं तो तुझे निष्पाप बताऊँगा

इसे जानकर सविज्ञान अशुभमुक्त हो जाएगा !१

इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे !

ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् !!

विद्याराज गूढ़राज यह पावन अक्षय अत्युत्तम

फलदायी प्रकट धर्ममय धारण करने में सुगम !२

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम् !

प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम् !!

इस धर्म के प्रति जो पुरुष श्रद्धाहीन परन्तप !

मुझे न पाकर आते हैं मृत्युलोक के मार्ग पर !!३

अश्रद्धाना: पुरुषा धर्मस्यास्य परन्तप !

अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि !!

मेरे इस अव्यक्त रुप से यह सकल संसार पूरित!

सब जीव मुझमें स्थित किंतु नहीं मैं उनमें स्थित!

एवं जीव न मुझमें स्थित मेरा योग ईश्वरीय देख!

जीवसृजक और पालक मेरा न जीवस्थ आरेख!

जैसे नभस्थित वायु नित्य सर्वगामी महान !

वैसे सारे जीवों को मुझमें स्थित ऐसा मान !!६

यथाकाशस्थितो नित्यं वायुः सर्वत्रगो महान् !

तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय !!

सभी जीव हे कौन्तेय पहुँचते मेरी प्रकृति को

कल्पक्षय में पुनः रचता मैं कल्पादि में उनको !७

सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम् !

कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम् !!

स्वप्रकृतिको वशमें कर रचता हूँ बार बार मैं

पूरे इस प्राणीदल को जो बंधा प्रकृतिपाश से !!८

प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः

!भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् !!

किन्तु मुझे न बांधते धनञ्जय वे कर्म सारे !

उदासीन रहते हुए अनासक्त मैं उन कर्मों में !!९

न च मां तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय !

उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु !!

मेरे ईक्षण से प्रकृति चर अचर सब जनती है !

इस कारण हे कौन्तेय सृष्टि बदलती रहती है !१०

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम् !

हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते !!

मनुजदेह में मुझे देख मूढजन करते अवज्ञा

परमस्वरुप न जानकर मेरे जीवमहेश्वर का !!११

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम् !

परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम् !!

अविवेकीजन की आशा कर्म ज्ञान नष्ट हो जाते!

राक्षसी आसुरी एवं मोह्हिनी प्रकृति जो अपनाते!

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः !

राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोह्हिनीं श्रिताः !!१२

किंतु मह्हात्माजन रह्हते दैवी प्रकृति के बलपर !

मुझे भजते एकमनसे अक्षय जीवमूल जानकर!

मह्हात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः !

भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् !!१३

दृढ़व्रती व यत्नशील मुझे गाता हुआ सदा !

भक्तिसे नमता हुआ नितयोगी मुझे उपासता!१४

सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढ़व्रताः !

नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते !!

अन्य मुझे एक रुपमें ज्ञानयज्ञसे पूजन करता

एवं बहुधा भिन्न भिन्न विश्वरुपमें करे उपासना !१५

ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये यजन्तो मामुपासते !

एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखम् !!

मैं क्रतु हूँ मैं यज्ञ हूँ मैं स्वधा हूँ औषधि मैं !

मैं मंत्र हूँ मैं ही घृत मैं अग्नि हूँ आहुति मैं !!१६

मैं पिता इस जगत का माता धाता पितामह !

ज्ञेय पावन ओंकार ऋक् साम व यजुर्वेदसह !१७

गति भर्ता प्रभु साक्षी वास शरण हृदय उदार !

जन्म लय स्थान निधान एवं अक्षय मूलाधार!१८

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहममौषधम् !

मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् !!

पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः !

वेद्यं पवित्रमोङ्कार ऋक्साम यजुरेव च !!

गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत् !

प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम् !!

मैं तपता हूँ धारण करता एवं करता मैं वर्षण !

अमृत एवं मृत्यु भी मैं सत् एवं असत् अर्जुन !१९

तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च !

अमृतं चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन !!

तीनों वेदगामी निष्पाप सोमरस पीते जो

यज्ञसे मुझे पूजकर स्वर्ग की करते याचना !

वे इन्द्र के सुखद लोक को पाकर देवहित

स्वर्ग में लब्ध भोग भोगते दिव्य सबका !!२०

त्रैविद्या मां सोमपा: पूतपापा: यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते !

ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोकमश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान् !!

स्वर्ग के उन विपुल सुखों भोगकर वे

क्षीणपुण्य मृत्युलोक में आते हैं !

इस प्रकार तीनों वेदों का आश्रय ले

कामाचारी जग में आते जाते हैं !!२१

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं

क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति !

एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतं कामकामा लभन्ते !!

अनन्यभक्त चिंतनपूर्वक जो करते मेरी पूजा !

ऐसे नित्य योगरतों की करता मैं पूर्ति सुरक्षा !२२

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जना: पर्युपासते !

तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् !!

भक्त जो भी श्रद्धापूर्वक अन्य देवों को पूजते !

वे भी मेरा ही कौन्तेय विधिरहित पूजन करते !२३

येऽप्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विता: !

तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम् !!

कारण भोक्ता एवं स्वामी मैं ही यज्ञों के सारे !

पर वे तत्वसे जानते न मुझे अत: गिर जाते !!२४

अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च !

न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते !!

देवव्रत देवों को पाते पितृव्रत पितरों को पाते

भूतभक्त भूतों को पाते मेरे भक्त मुझे ही पाते !२५

यान्ति देवव्रता देवान् पितृन्यान्ति पितृव्रताः !

भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम् !!

पत्र पुष्प फल नीर मुझे भक्तिसहित चढ़ाते जो

भोग लगाता भक्त से भक्त्यर्पित उस भेंट को !२६

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति !

तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः !!

जो काम जो भोजन जो यज्ञ करता जो दान !

जो तप हो उसे कौन्तेय अर्पण करे मेरे नाम !२७

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् !

यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् !!

ऐसे शुभाशुभ फलवाले कर्मबंध से छूटेगा !

सन्यासयोगयुक्त मानव मुक्त मुझे पा लेगा !!२८

शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनै:!

सन्न्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि !!

सब जीवों में एकरुप मैं न वैरी न मेरा प्रेमी है !

पर जो मुझे भक्तिसे भजते वे मुझमें व उनमें मैं!

समोऽहं क्षसर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रिय:!

ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् !

यदि मुझे अतिदुराचारी भी अनन्यभावसे भजता

साधु ही वह माना जाता चूॅंकि वह सुनिश्चयवाला

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् !

साधुरेव स मन्तव्य: सम्यग्व्यवसितो हि स: !!३०

शीघ्र धर्मात्मा हो जाता शाश्वतशांति पा जाता !

कौन्तेय इतना समझो मेरा भक्त न मिट पाता !३१

मेरा आश्रय लेकर पार्थ पापजन्म वाले भी जो !

स्त्री वैश्य तथा शूद्र भी सब पाते परमगति को !३२

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः !

स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम् !

फिर ब्राह्मण पुण्यवान भक्त व राजर्षि क्या !

क्षर असुख देह यह पाकर करो भजन मेरा !!३३

किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा !

अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम् !!

मेरा मन हो मेरा भक्त मेरा पूजक मुझे नमनकर

मेरे निर्भर मुझेही पाओगे ऐसे आपको जोड़कर !

मन्मना भव मत्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु !

मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः !!३२

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : दस

श्रीभगवान् बोले -

फिर से सुनो महाबाहो मेरे ये अतिश्रेष्ठ वचन !

जिसे कहूँगा मैं तुम्हें तेरी हितेच्छा से प्रियमन !!१

भूय एव महाबाहो श्रृणु मे परमं वचः !

यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया !!

नहीं जानते मेरा उद्भव सुरगण एवं महर्षिगण !

देवों एवं महर्षियों का हर प्रकार मैं मूलकारण !२

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः !

अहमादिर्हि देवानां महर्षिणां च सर्वशः !!

अज अनादि व लोकमहेश्वर जो जानता मुझे !

मर्त्यों में न मूढ वह तथा उबरता सब पापों से !३

यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम् !

असम्मूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते !!

बुद्धि ज्ञान विवेक सत्य दम शम एवं क्षमा !

सुखदु:ख व उदयप्रलय भय एवं निर्भयता !!४

समता तुष्टि यश अयश दान तप एवं अहिंसा

प्राणियों के मुझसे ही होते भिन्न ये भावविधा !!५

बुद्धिर्ज्ञानमसम्मोह: क्षमा सत्यं दम: शम: !

सुखं दु:खं भवोऽभावो भयं चाभयमेव च !!

अहिंसा समता तुष्टिस्तपो दानं यशोऽयश: !

भवन्ति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधा: !!

पहले के चारों ब्राह्मण सात महर्षि मनु तथा !

मानसजात मेरे भक्त जग में जिनकी ये प्रजा !६

महर्षय: सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा !

मद्भावा मानसा जाता येषां लोके इमा: प्रजा: !!

योग व मेरी इस विभूति का तत्वसे जिसे ज्ञान !

निश्चल भक्तिसे जुड़ता वो यहाँ नहीं शंकामान !७

एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वत: !

सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशय: !!

सगर सृष्टिका मूल मैं मुझसे सब चेष्टा करते !
यही मानकर श्रद्धासे बुद्धिमान मुझे भजते !! ८
अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते !
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः !!
मुझमें चित्तप्राण अर्पित आपसमें बोध कराते
एवं कथा करते सदा सुख पाते व मुझमें रमते !९
मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम् !
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च !!
सदा योगमें रहनेवाले प्रेमसे भजनेवाले को !
बुद्धियोग देता उसे इससे वे मिलते मुझको !!१०
तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् !
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते !!
अज्ञानजात अंधेरे को उनपर ही अनुकंपा से !
मारता हूँ ज्योतिमय स्वरुपस्थित ज्ञानदीपसे !११
तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः !

नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता !!

अर्जुन बोले -

परम् ब्रह्म परम् धाम सबसे पावन आप !

पुरुष शाश्वत पूर्वतनु दिव्य अजन्मा व्याप्त !!१२

आपसे कहते ऋषि सभी देवर्षि नारद तथा !

असित देवल व्यास मुझे एवं आप भी कथा !१३

परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान् !

पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम् !!

आहुस्त्वामृषय: सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा !

असितो देवलो व्यास: स्वयं चैव ब्रवीषि मे !!

आप मुझे जो कहते सब केशव सत्य मानते !

पर न भगवन् देव दानव यह अवतार जानते !१४

सर्वमेतदृतं मन्ये यन्मां वदसि केशव !

न हि ते भगवन्व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवा: !!

आप स्वयं ही जानते आपसे आपको नरश्रेष्ठ !

हे जगतपति भूतभावन हे भूतेश्वर देवाधिदेव !१५

स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम !

भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते !!

अत: दैवी स्वविभूतिको पूरा कहनेमें सिद्ध हो !

इनसे स्वयं इन लोकोंको व्याप्तकर स्थित हो !१६

वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतय: !

याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि !!

कैसे जानूँ हे योगी मैं आपको सदा चिंतन से !

किन किन भावोंमें चिंत्य हो हे भगवन् मेरेसे !१७

कथं विद्यामहं योगिंस्त्वां सदा परिचिंतयन् !

केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया !!

अपने योग कृतियोंको पुन: कहें पूरा जनार्दन !

चूंकि मैं न तृप्त हो रहा सुनकर ये अमृतवचन !१८

विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन !

भूय: कथय तृप्तिर्हि श्रृण्वतो नास्ति मेऽमृतम् !!

श्रीभगवान् बोले -

ठीक है कुरुश्रेष्ठ वैसे मेरी तो अनन्त विभूतियाँ !

मुख्य दिव्य विभूतियोंको सविस्तार तुझे कहूँगा !

हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतय: !

प्राधान्यत: कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे !!१९

गुडाकेश मैं सब जीवों का हृदयस्थित आत्मा !

मैं ही आदि हूँ जीवों का एवं मध्य अन्त तथा!२०

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थित: !

अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च !!

आदित्योंमें विष्णु मैं अंशुमान ज्योतियों में

मरुतों में मरीचि मैं हूँ चन्द्रमा हूँ नक्षत्रों में !!२१

आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान !

मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी !!

वेदों में सामवेद हूँ देवराज हूँ देवों में !

इन्द्रियों में मन तथा चेतना हूँ जीवों में !! २२

वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः !

इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना !!

रुद्रगणों में शंकर हूँ यक्षरक्ष में वित्तपति !

वसुओं में पावक हूँ एवं पर्वतों में मेरुगिरि !!२३

रुद्राणां शङ्करश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम् !

वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम् !!

पुरोहितोंमें मुख्य पार्थ मुझे जानो बृहस्पति !

सेनापतियोंमें स्कन्द मैं जलकरोंमें अंबुपति !!२४

पुरोधसां च मुख्यं मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम् !

सेनानीनामहं स्कन्दः सरसामस्मि सागरः !!

महर्षियों में मैं भृगु शब्दों में हूँ मैं ओंकार !

यज्ञों में जपयज्ञ हूँ अचरों में हूँ हिमागार !! २५

महर्षिणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम् !

यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः !!

वृक्षविधाओं में पीपल एवं नारद देवर्षियोंमें !

गन्धर्वों में चित्ररथ कपिल मुनि हूँ सिद्धों में !!२६

अश्वत्थ: सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारद: !

गन्धर्वाणां चित्ररथ: सिद्धानां कपिलो मुनि: !!

अश्वों में उच्चैःश्रवा जानो मेरी अमर कृति !

गजराजों में ऐरावत एवं मनुजों में नरपति !!२७

उच्चैःश्रवसमश्वानां विद्धि माममृतोद्भवम् !

ऐरावतं गजेन्द्राणां नराणां च नराधिपम् !!

आयुधों में वज्र मैं धेनुकुल में कामधेनु !

प्रजननभाव मदन हूँ सर्पों में हूँ वासुकि !!२८

आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक् !

प्रजनश्चास्मि कन्दर्प: सर्पाणामस्मि वासुकि: !!

नागों में अनन्त हूँ एवं जलजीवों में वरुण !

पितरों में अर्यमा हूँ एवं शासकों में हूँ यम !!२९

अनन्तश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम् !

पितृणामर्यमा चास्मि यम: संयमतामहम् !!

दैत्यों में प्रह्लाद हूँ एवं काल मैं गणकों में !

चौपदों में सिंह हूँ तथा गरुड़ मैं पंछियों में !!३०

प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां कालः कलयतामहम् !

मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेय श्चपक्षिणाम् !!

शुचिकरों में वायु हूँ शस्त्रधारियों में मैं राम !

जलजीवों में मगर हूँ सरिताओं में मैं गङ्गा !! ३१

पवनः पवतामस्मि रामः श्रशस्त्रभृतामहम् !

झषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी !!

सृष्टियों का आदि अंत अर्जुन एवं मध्य मैं !

विद्याओंमें आत्मविद्या विमर्शोंका विषय मैं !!३२

सर्गाणामादिरन्तश्च मध्य चैवाहमर्जुन !

अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम् !!

अक्षरों का अकार हूँ संधियों में द्वन्द्व मैं !

मैं ही अक्षयकाल एवं धाता विश्वदन मै !! ३३

अक्षराणामकारोऽस्मि द्वन्द्व; सामासिकस्य च !

अहमेवाक्षयः कालो धाताहं विश्वतोमुखम् !!

सर्वहारी मृत्यु हूँ मैं और भविष्य की उत्पत्ति !

स्त्रियोंमें कीर्ति श्री वाणी स्मृति मेधा क्षमा धृति !

मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्भवश्च भविष्यताम् !

कीर्तिः श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा !

बृहत्साम गेय श्रुतियों में मैं गायत्री छन्दों में !

मासों में मार्गशीर्ष और वसंत मैं ऋतुओं में !!३५

बृहत्साम तथा साम्नां गायत्री छन्दसामहम् !

मासानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः !!

जुआ हूँ छलधर्मियों में तेज मैं तेजस्वियों में !

जय हूँ व्यवसाय हूँ सत्त्वगुण मैं सात्त्विकों में !३६

द्यूतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् !

जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम् !

वृष्णियों में वासुदेव हूँ पाण्डवोंमें वीर पार्थ !

मुनियोंमें व्यास मैं कवियों में भी शुक्राचार्य !!३७

वृष्णीणां वासुदेवोऽस्मि पाण्डवानां धनञ्जयः !

मुनीनामप्यहं व्यासः कवीनामुशना कविः !!

शासकोंमें दण्ड हूँ जयकामियों में विधान!

रहस्यों में मौन हूँ और ज्ञानियों में मैं ज्ञान !!३८

दण्डो दमयतामस्मि नीतिरस्मि जिगीषताम् !

मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानंश्रज्ञानवतामहम् !!

सब जीवोंका मूल जो मैं वह बीज धनुर्धर !

मेरे बिना हो सके नहीं है वह जीव चराचर !!!३९

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन !

न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम् !!

मेरी दिव्य विभूतियोंका अन्त नहीं हे परंतप !

यह तो संक्षेप कहा मैंने विभूति विस्तारपूर्वक!४०

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परन्तप !

एष तूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया !!

जो जो सृष्टि श्रीपूरित ऊर्जायुक्त एवं महान !

मेरे तेजांश से ही तुम उन सबको संभव मान!४१

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा !

तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम् !!

अथवा ऐसे बहुत ज्ञानसे क्या लेना अर्जुन तुझे

मैं इस सम्पूर्ण जगमें व्याप्त स्थित एक अंशसे !!

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन !

विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् !४२

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : ग्यारह

अर्जुन बोले -

गोपनीय अध्यात्मविषयक मेरे लिए अनुग्रहसे !
आपने जो ज्ञान कहे मिटा मोह मेरा यह इससे !१

मदनुग्रहाय परमं गुह्यमध्यात्मसञ्ज्ञितम् !
यत्त्वयोक्तं वचस्तेन मोहोऽयं विगतो मम !!

कारण जीवोंके उद्भव लय सुना मैंने विस्तारसे !
एवं अव्यय माहात्म्य भी हे पद्मपत्राक्ष आपसे !२

भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया !
त्वत्तः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चाव्ययम् !!

जैसा आप स्वयंको कहते वैसा यह परमेश्वर !
उस ईश्वरीय रुप को देखना चाहूँ हे पुरुषवर !!३

एवमेतद्यथात्थ त्वमात्मानं परमेश्वर !
द्रष्टुमिच्छामि ते रुपमैश्वरं पुरुषोत्तम !!

हे प्रभु यदि मानते ऐसा मुझसे संभव वह देखना

तो योगेश्वर मुझे दिखाएं आप अव्यय रुप अपना

मन्यसे यदि तच्छक्यंमया द्रष्टुमिति प्रभो !

योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शयात्मानमव्ययम् !!४

श्रीभगवान् बोले -

दर्शन कर लो हे पार्थ अब विग्रह सौ हजार !

मेरे दिव्य नाना प्रकार एवं नाना रंग आकार !!५

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्त्रश: !
नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च !!
देखो आदित्यों वसुओं रुद्रों अश्विनों मरुतों को !
पहलेसे अदृष्ट भारत कई विस्मयकर रूपों को ६
पश्यादित्यान्वसून्रुद्रानश्विनौ मरुतस्तथा !
बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि भारत !!
एक क्षेत्रमें सृष्टि सारी देखो आज संग चराचर !
गुडाकेश मेरे इस तनमें देखना चाहो और इतर !७

इहैकस्थं जगत्कृत्स्नं पश्याद्य सचराचरम्!

मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद्द्रष्टुमिच्छसि !!

किंतु मुझे तुम देख ही न सकते इस स्वनेत्रसे !

देखो मेरा योग ईश्वरीय दिव्य चक्षु देता तुम्हें !!८

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव स्वचक्षुषा !

दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम् !!

सञ्जय बोले -

ऐसा कहकर हे राजन् महायोगेश्वर हरिने !

दिखा दिये पार्थ को परंरूप ईश्वरीय अपने !!९

एवमुक्त्वा ततो राजन्महायोगेश्वरो हरिः !

दर्शयामास पार्थाय परमं रूपमैश्वरम् !!

अनेक वदन नयन हैं अनेक दर्शन हैं अद्भुत !

अनेक दिव्याभूषण दिव्यानेक तत्पर आयुध !!१०

दिव्य माला वस्त्र पहने दिव्य गंध लेपनयुक्त !

पूर्ण विस्मयकारी देव अनंत सब ओरसे मुख !!११

अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम् !
अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम् !!
दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् !
सर्वाश्चर्यमयं देवमनन्तं विश्वतोमुखम् !!
नभमें यदि हजारों सूरज उदित एकसाथ हो !
उस महामना के समान संभव है प्रकाश हो !!१२
दिवि सूर्यसहस्त्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता !
यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः !!
देवाधिदेवके उस देहमें देखा एकस्थ जग सारा !
उस समय पाण्डवने बंटा हुआ बहुत विधाका !१३
तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा !
अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा !!
रोमांचित विस्मयभरा वह धनञ्जय तत्पश्चात !
बोले देवसे हाथ जोड़ मस्तकसे करके प्रणाम !!१४

ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनञ्जय !

प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिरभाषत !!

अर्जुन बोले -

देखता हूँ देहमें देव तेरे देवोंको और जीवोंके कई मुख्य दलको !

कमलासन ब्रह्मदेव एवं ईश शिवको और दैवी सर्पसमेत ऋषिगणको !!१५

पश्यामि देवांस्तव देव देहे सर्वांस्तथा भूविशेषसङ्घान् !

ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थमृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान् !!

देखता हूँ कई बांहें उदर चक्षु मुखवाला सभी ओरसे अनन्त रुपवाला !

देखता न अन्तादि फिर नहीं मध्य ही हे जगदीश विराट रुप आपका !!१६

अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम् !

नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप !!

गदाचक्र व मुकुटवाला तेजपुंज सब ओरसे दीप्तिवाला !

देखता हूँ आपको दुर्दश्य दीप्ताग्नि जो सूर्यसा अकूत द्युतिवाला !!१७

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम् !

पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्तात् दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् !!

परं अक्षर आप हो जाननेके योग्य हो इस जगतके श्रेष्ठ आश्रय !

अविनाशी आपहो धर्मसंरक्षक शाश्वत पुरुष सनातन मेरा आशय !!१८

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् !

त्वव्यय: शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे !!

आदिमध्यअंतहीन अनंतबल अनंतभुज नेत्र सूर्य चन्द्रसा !

देखता हूँ आपका मुख दीप्त आगसा स्वतेजसे जगको तपाता !!१९

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यमनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम् !

पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रं स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम् !!

धरासे स्वर्गको सबदिशा आकाशको एक आपसे पूरित है !

अद्भुत यह देखा उग्ररूप आपका महामना त्रिलोक व्यथित है !!२०

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः !

दृष्ट्वाद्भुतं रूपमुग्रं तवेदं लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन् !!

झुंड ये देवताके समा रहे आपमें कई डरसे करबद्ध गान करते !

स्वस्तियां बोलके महर्षिसिद्धदल ये
ढ़ेर स्तुतियों से यशगान करते !!२१
अमी हि त्वां सुरसङ्घा विशन्ति केचिद्भीताः
प्राञ्जलयो गृणन्ति !
स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्धसङ्घाः स्तुवन्ति त्वस्तुतिभिः पुष्कलाभिः !!
रुद्र वसु आदित्य विश्वेदेव और साध्य अश्विन मरुत पितृ ऊष्मखाते ये !
गन्धर्व यक्ष असुर सिद्ध के समूह देख रहे आपको विस्मयसे सारे !!२२

अनेको हाथ नैन मुख जांघ और पैर अनेको उदर अतिविकराल दाढ़ !

विराट रुप देखकर हे महाबाहु व्यथित हो रहे मैं एवं जीव साथ !!२३

रूपं महत्ते बहुवक्त्रनेत्रं महाबाहो बहुबाहुरुपादम् !

बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालं दृष्ट्वा लोका: प्रव्यथितास्तथाहम् !!

रूप गगनछूते वर्ण कई चमकते खुला मुख नेत्र बड़े दीप्तिमान !

देखकर आपको व्यथित अन्तरात्मा धैर्यशांतिका हे विष्णु नहीं भान !!२४

नभ:स्पृशं दीप्तमनेकवर्णं व्यात्ताननं

दीप्तविशालनेत्रम् !

दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो !!

विकट दाढ़वाला और कालज्वाला जैसे आपके मुखों को देखकर !

न शेष दिशाज्ञान एवं न शांतिभान प्रसन्न हों जगनिवास देवेश्वर !!२५

दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि दृष्ट्वैव

कालानलसन्निभानि !

दिशो न जाने न लभे न शर्म प्रसीद देवेश जगन्निवास !!

धृतराष्ट्र पुत्र सारे साथ ही नरेशदल के !

भीष्म द्रोण कर्ण संग स्वपक्ष योद्धा के !!२६

वेगसे जा रहे विकट दाढ़वाले मुखों में !

कई भंग सिरवाले फंसे दिखते दांतों में !!२७

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः सर्वे

सहैवावनिपालसङ्घैः !

भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथासौ सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः !!

वक्त्राणि ते तवरमाणा विशन्ति दंष्ट्राकरालानि भयानकानि !
केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु सन्दृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गै: !!

जैसे सागर ओर जाते नदियोंके कई धार ही !
आपके प्रदीप्त मुखोंमें वे भूवीर जाते वैसे ही २८
यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगा: समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति !
तथा तवामी नरलोकवीरा विशन्ति वक्त्राण्यभिविज्वलन्ति !!

दीप्त आगमें जैसे कीड़े मिटने हेतु वेगसे जाते !
ऐसे आपके मुंहोंमें जीव नष्ट होने वेगसे जाते२९
यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतंङ्गा विशन्ति नाशाय समृद्धवेगा: !
तथैव नाशाय विशन्ति लोकास्तवापि वक्त्राणि समृद्धवेगा: !!

ज्वलित मुखोंसे सब जीवोंको सब ओर ग्राससा चाट रहे !

सारे जगको निज उग्र तेजसे भरकर विष्णो ताप दे रहे !!३०

लेलिह्यसे ग्रसमान: समन्ताल्लोकान्समग्रान्वदनैर्ज्वलद्भि: !
तेजोभिरापूर्य जगत्समग्रं भासस्तवोग्रा: प्रतपन्ति विष्णो !!
हे देववर नमन आपको मुझे कहें मुदित हो कौन आप उग्र रुपवाले !
आदिपुरुष आपको जानूँ सही से नहीं जानता आपके भाव आगे !!३१
आख्याहि मे को भवानुग्ररूपो नमोऽस्तु ते देववर प्रसीद !
विज्ञातुमिच्छामि भवन्तमाद्यं न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम् !!

श्रीभगवान् बोले -

लोकनाशको बढ़ा हुआ काल हूँ इनलोगों को अभी समेटने आया !

नहीं रहेंगे ये सभी तुम छोड़ो तोभी जो खड़े सेना विपक्षमें तेरे योद्धा !!३२

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत: !

ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे येऽवस्थिता: प्रत्यनीकेषु योद्धा: !!

इसलिए तुम उठो यशका लाभ लो शत्रु जीतकर पुष्टराज्य भोग कर !

मेरे द्वारा ये सभी मारे गये पहले ही हे सव्यसाची बनो निमित्तमात्र !!३३

तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व जीत्वा शत्रून्भूङ्क्ष्व राज्यं समृद्धम् !

मयैवैते निहता: पूर्वमेव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन् !!

द्रोण भीष्म एवं कर्ण एवं जयद्रथ तथा दूसरे भी शूरवीर !

मारे गए मेरेसे मारो तुम न दुखी हो लड़ो रणमें शत्रु लोगे जीत !!३४

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च कर्णं तथान्यानपि योधवीरान् !

मया हतांस्त्वां जहि मा व्यथिष्ठा युद्धस्व जेतासि रणे सपत्नान् !!

सञ्जय बोले -

केशव के ये वचन सुनकर करबद्ध कंपित मुकुटधर !

नमन करके कृष्णसे भरे स्वरमे फिर बोले डरकर झुककर !!३५

एतच्छ्रुत्वा वचनं केशवस्य कृताञ्जलिर्वेपमानः किरीटी !

नमस्कृत्वा भुय एवाह कृष्णं सगदगदं भीतभीतः प्रणम्य !!

अर्जुन बोले-

सत्य ही हृषीकेश कीर्तनसे आपके हर्ष पा रहा जग राग पा रहा !

भयवश राक्षस भागते दिशाओंमेंनौ सिद्धसंघ पूरा माथा झुका रहा !!३६

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च !

रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसङ्घाः !!

क्यों न करे नमन हे महात्मन् श्रेष्ठ एवं ब्रह्मा के भी आदिकर्ता जो !

हे अनन्त देवेश जगन्निवास सदसत् परे अक्षर आप जो !!३७

कस्माच्च ते न नमेरन्महात्मन् गरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे !

अनन्त देवेश जगन्निवास त्वमक्षरं सदसत्तत्परं यत् !!

आदिदेव आप पुरुष पुराण आप इस जगके परंआधार !

ज्ञाता हैं और ज्ञेय एवं परमधाम अनन्तरूप आपसे भरा संसार !!३८

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणः त्वमस्य विश्वस्य परंनिधानम् !

वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम त्वया ततं विश्वमनन्तरूप !!

वायु वरुण आप पावक नियंता निशापति प्रजापति पिता के पिता !

नमन है नमन है आपको हजार फिरसे नमन नमन आपका !! ३९

वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च !

नमो नमस्तेऽस्तु सहस्त्रकृत्वः पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते !!

नमस्कार आगेसे आपको अब पीछेसे हे सर्व आपको नमन सब ओरसे !
अनन्तबली आप पराक्रमी अपार सबकुछ आप हो सबकुछ समेटे !! ४०
नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व !
अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः !!
सखा ही समझकर हठसे कहा जो हे कृष्ण हे यादव ऐसा हे सखा !
जाने बिन आपकी महिमा ये सारी प्रेम या प्रमादसे मुझसे हुआ !! ४१
अकेला ही हासमें या परिजनोंमें खेल में शयन में या भोजकालमें !
असत् जो किया हे अच्युत अप्रमेय वो सब मैं मांगू आपसे क्षमामें !! ४२

सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हे कृष्ण हे यादव हे सखेति !

अजानता महिमानं तवेदं मया प्रमादात्प्रणयेन वापि !!

यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि

विहारशय्यासनभोजनेषु !

एकोऽथवाप्यच्युत तत्समक्षं तत्क्षामये त्वामहमप्रमेयम् !!

इस लोकके पिता हो चराचरके पूज्य आप ही गुरुओं में महान !

सम नहीं आपके फिर अधिक कैसे तीनों भुवनमें दूसरा अतुलमान !! ४३

पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य विश्वस्य गुरुर्गरीयान् !

न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव !!

अत: मैं नमनकर तनको गिराकर मुदित करना चाहूँ स्तुत्य ईश आपको !

पुत्रसे पिता सखासे सखा प्रेमी प्रिया जैसे देव योग्य आप हो !! ४४

तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायं प्रसादये त्वामहमीशमीड्यम् !

पितेव पुत्रस्य सखेव सख्यु: प्रिय: प्रियायार्हसि देव सोढुम् !!

देखा न पहले हर्षित हूँ देख उसे भयसे तथा व्यथित मेरा मन !

दिखाइए मुझे वही देवविग्रह जगनिवास देवेश होइए प्रसन्न !! ४५

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा भयेन च प्रव्यथितं मनो मे !

तदेव दर्शय मे देवरूपं प्रसीद देवेश जगन्निवास!

शीशमुकुट हाथमें गदा चक्र पंकज देखना मैं चाहूँ ऐसे ही आपको !

हे विश्वमूर्ति हजार हाथ वाले ले आइये चतुर्भुज ही रूपको !! ४६

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तमिच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव !

तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्त्रबाहो भव विश्वमूर्ते

मैंने स्वयोगसे तुमको हे अर्जुन यह श्रेष्ठ रूप मोदसे ही दिखाया !

तेरे सिवा पहले देखा न रूप ये मेरा अनंत विश्व आदि तेजवाला !! ४७

मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं रूपं परं दर्शितमात्मयोगात् !

तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यं यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम् !!

न वेदपाठसे न यज्ञ दानसे न हठक्रियाओं से न उग्र तपसे !

मैं ऐसे रूप में मनुष्यदेहमें देखा न जा सकूँ सिवा तेरे कुरुश्रेष्ठ !! ४८

न वेदयज्ञाध्ययनैर्न न दानैर्न च क्रियाभिर्न तपोभिरुग्रैः !
एवंरूपः शक्य अहं नृलोके द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर !!
न तुम व्यथित हो न मूढबुद्धि हो घोर रूप ऐसा मेरा ये देखकर !
भय छोड़ प्रीत जोड़ दर्शन करो तुम फिर से वही मेरा देवविग्रह !! ४९
मा ते व्यथा मा च विमूढभावो दृष्ट्वा रूपं घोरमीदृङ् ममेदम् !
व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनस्त्वं तदेव मे रूपमिदं प्रपश्य !!
ऐसा कहकर वासुदेवने अर्जुनको देवरूप निज फिर दिखलाया !
एवं आस दिया डरे हुए को सौम्य रूप होकर पुनः महात्मा !! ५०

इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोक्त्वा स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः !

आश्वासयामास च भीतमेनं भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा !!

अर्जुन बोले -

हे जनार्दन देखकर यह सौम्य आपका मानुष रूप !

अब तो स्वाभावगत हो गया हूँ चेतना युक्त !!५१

दृष्ट्वेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन !

इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः !!

श्रीभगवान् बोले -

अति दुर्लभ रूप यह जो मेरा तुमने देखा है !

इस रूपका सदा देव भी दर्शनेच्छू रहता है !!५२

सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम !

देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकांक्षिणः !!

नहीं वेदसे नहीं तपसे नहीं दानसे नहीं हवनसे!

संभव नहीं देखना ऐसे मुझे देख सका है जैसे !!

नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया !
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा !! ५३
किंतु केवल एकभक्तिसे अर्जुन ऐसा मैं संभव!
दिखने जानने व प्रवेशमें तत्व रुपसे हे परंतप५४
भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोर्जुन !
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप !!
मेरा कर्मी मेरा परायण मेरा भक्त सङ्गविहीन !
पांडव मुझे वो पाता जो सब जीवोंमें वैरहीन५५

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : बारह

इस भांति जो नित्ययोगमें भक्त आपकी करे उपासना !

और जो अक्षर अरूप की ही उनमें योगविद कौन बड़ा !! १

एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते !

ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमा: !!

श्रीभगवान् बोले -

मुझमें जो मन लगाकर नितयोगसे उपासते !

परं श्रद्धापूरित वे सर्वोत्तम योगी मेरे मतसे !! २

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते !

श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्तमा मता: !!

परंतु जो अक्षर अदर्शनीय सर्वव्याप्त अरुपकी !

उपासना करे अचिंत्य निर्विकार अचल ध्रुवकी !!३

सर्वत्र समबुद्धि जो नियमित करे इन्द्रियगुटको !
प्राणी हितमें रमनेवाले वे पाते केवल मुझको !!४

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते !
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम् !!
सन्नियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः !
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः !!

क्लेश अधिक पाते जो अव्यक्तमें चित्त लगाते !
कारण अव्यक्तका अभ्यास दुखसे देही पाते !!५

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम् !
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते !!

किंतु जो मेरे परायण सब कर्मों को मुझे सौंपते !
एकलयोगसे मेरा ही ध्यान संग उपासना करते६

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्न्यस्य मत्पराः !
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते !!

उनका मैं उद्धारक बनता नाशवान भवसागरसे !
हे पार्थ बिना देरके जो मुझमें आविष्टमन रहते !७

तषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् !
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् !!

मुझमें ही मन रोपकर मुझमें बुद्धि करे निवेश!
तो मुझमें ही वास करेगा इसमें न कोई संदेह !!८

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय !
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः !!

मुझमें चित्त स्थापनमें अगर नहीं पाते सामर्थ्य !
तो करो मुझे पानेकी इच्छा योगाभ्याससे पार्थ!९

अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम् !
अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय !!

साधनामें भी यदि अबल हो मेरे कर्मपरायण हो
मेरे प्रति कर्मोंको करते सिद्धिको भी प्राप्त करो!

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव !

मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि !! १०

मेरे योगके सहारे यदि ये करनेमें भी अक्षम हो !

तो आत्मयती होकर सब कर्मफल त्याग करो११

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः !

सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् !!

ज्ञान ही श्रेष्ठ अभ्याससे ज्ञानसे है श्रेष्ठ ध्यान !

ध्यानसे कर्मफलत्याग त्यागसे शांति तत्काल १२

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते !

ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् !!

सब जीवोंमें अद्वेषी मित्र करुण व ममताहीन !

सुखदुखमें जो सम हो अहंरहित व क्षमाशील१३

सदा संतुष्ट रहनेवाला संयमी योगी दृढ़निश्चय !

मनबुद्धि मुझमें अर्पित मेरा भक्त वो मुझे प्रिय!१४

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च !

निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी !!

संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढ़निश्चयः !

मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः !!

ऊबता न जीव जिससे एवं जीवसे वो न ऊबे !

हर्ष द्वेष उद्वेग व भयसे जो मुक्त वो प्रिय मुझे१५

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः !

हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः !!

आशाहीन स्वच्छ प्रवीण उदासीन रिक्त कष्टसे !

त्यागी सर्वारम्भका जो मम भक्त वो प्रिय मुझे १६

निरपेक्षः शुचिर्दक्षः उदासीनो गतव्यथः !

सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः !!

जो न हर्ष न द्वेष करते न चिंता न इच्छा करते!

शुभाशुभका त्यागी जो भक्तिमय वो प्रिय मुझे !!

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति !

शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्य: स मे प्रिय: !!१७

सम हो शत्रु और मित्रमें तथा मान अपमानमें !

संगहीन समान हो शीत धूप सुख और तापमें१८

निंदा स्तुतिमें समान मौनी मुग्ध यथास्थितिमें !

मुक्त गेहसे अचलमति भक्तिमय नर प्रिय मुझे !१९

सम: शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयो: !

शीतोष्णसुखदु:खेषु सम: सङ्गविवर्जित: !!

तुल्यनिंदास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित् !

अनिकेत: स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नर: !!

इस यथोक्त धर्मसुधाको जो श्रद्धालु सेवते
मेरे परायण भक्त वे अति प्रिय मेरे लिये !! २०
ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते !
श्रद्धाना पत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रिय: !!

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : तेरह

श्रीभगवान् बोले -

यह शरीर कुन्तीनन्दन क्षेत्र ऐसा कहलाता !

जो जानता इसे उसे ज्ञानी ने क्षेत्रज्ञ बताया !! १

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते !

एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः !!

मुझे ही क्षेत्रज्ञ समझो सारे क्षेत्रों में हे भारत !

क्षेत्र व क्षेत्रज्ञ ज्ञान जो वही ज्ञान है मेरा मत !!२

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत !

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम !!

वह क्षेत्र जो है जैसा है जिन दोषोंसे है जिससे !

और क्षेत्रज्ञ जिस प्रभावका सुनो मुझे संक्षेपसे !३

तत्क्षेत्रं यच्च यादृक् च यद्विकारि यतश्च यत् !

स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे श्रृणु !!

ऋषियोंने बहुविध बताया छन्दोंसे संभागकर !
ब्रह्मसूत्रपदों ने गाया युक्तिसंगत सुनिश्चयकर !!४

ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक् !
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः !!

पाँच भूत अहं एक मूल प्रकृति व बुद्धि एक !
दस इन्द्रियों के संग पाँच विषय व चित्त एक !!५

महाभूतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेव च !
इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः !!

इच्छा द्वेष सुख दुःख धारणा चेतना एवं देह !
इन विकारों को लेकर उद्धृत क्षेत्रका संक्षेप !!६

इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं सङ्घातश्चेतना धृतिः !
एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम् !!

मानाभाव अदम्भिता अहिंसा क्षमा सादापन !
गुरु की सेवा स्वच्छता स्थिरता चित्तनियंत्रण !!७

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् !

आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रह: !!

इन्द्रियकार्यों से विरक्ति एवं अहंकार निवारण !

जन्म जरा मृत्यु व्याधि तथा दुखमें दोषदर्शन !!८

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कार एव च !

जन्ममृत्युजराव्याधिदु:खदोषानुदर्शनम् !!

पुत्र पत्नि घर आदि में नहीं संगति न गाढ़ापन !

इष्ट अनिष्टमें मनका सदा हो समरूप आचरण!९

असक्तिरनभिष्वङ्ग: पुत्रदारगृहादिषु !

नित्यंक्षच समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु !!

एकलयोगसे मुझमें भक्ति हो बिना भटकाव !

एकलवासका अभ्यास जनसंसदसे अलगाव !१०

मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी !

विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि !!

अध्यात्मज्ञानमें नित्यता दर्शन में तत्वज्ञान !
यह ज्ञान ऐसा कहा इसके इतर जो अज्ञान !!११

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम् !
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा !!

जो ज्ञेय वो कहता हूँ इसे जानकर सुधास्वाद !
वह अनादि परंब्रह्म न ही सत् न असत् वाद !१२

ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते !
अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते !!

वह सर्वत्र हाथपगवाला सर्वत्र मुख नैन सर !
सर्वत्र कानवाला जगमें बैठा सबको ढककर !१३

सर्वत:पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् !
सर्वपबत:श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति !!

सब इन्द्रियोंका गुणतेज सब इन्द्रियोंका त्यागी !
निरासक्त सबका पालक निर्गुण एवं गुणभोगी !!

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् !

असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च !!१४

जीवों के बाह्र व भीतर चर एवं अचर वही !

सूक्ष्म होनेसे अज्ञेय वह सुदूर एवं समीप भी !१५

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च !

सूक्ष्मत्वात्तद्विज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत् !!

अविभक्त भी जीवोंमें स्थित जैसा पृथक् पृथक् !

एवं ज्ञेय वह जीवपोषक सृजनकर्ता व संह्रारक !

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् !

भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रह्ष्णिु प्रभविष्णु च !!१६

ज्योतियोंके भी ज्योति अंधेरा से दूर वे कथित !

ज्ञान ज्ञेय व ज्ञानगम्य सबके ह्रियमें व्यवस्थित !१७

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते !

ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम् !!

क्षेत्र यही है ज्ञान एवं ज्ञेय थोड़े में अभिव्यक्त !

इसे जानकर पा जाता मेरे भावको मेरा भक्त !!१८

इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः !

मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते !!

प्रकृति एवं पुरुष दोनों ही को अनादि जानो !

विकारों एवं गुणों को भी प्रकृतिप्रकट जानो !!१९

कार्यसाधन कर्तापनमें प्रकृति है उक्त कारण !

सुखदुःखोंके भोगीपन में पुरुष है उक्त कारण !!२०

प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्‌ध्यनादी उभावपि !

विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसम्भवान् !!

कार्यकरणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते !

पुरुषः सुखदु:खानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते !!

प्रकृतिस्थ पुरुष ही प्रकृतिभू गुणोंका भोक्ता !

सत असत् योनियोंमें गुणसंगवश जन्म होता !!२१

पुरषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान्गुणान् !

कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु !!

उपद्रष्टा व सम्मतिकर्ता पोषक महेश्वर भोक्ता !

पुरुष परमात्मा यही उक्त इस देहमें पर होता!!२२

उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः !

परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन् पुरुषः परः !!

पुरुष व प्रकृतिको जो गुणसे ऐसे जानता !

पूर्णतः वृत्तिमें भी फिर नहीं वो जन्म लेता !!२३

य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह !

सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते !!

कई देखते स्वयं आत्मा अंदर ध्यानयोगसे !

अन्य सांख्ययोगसे तथा दूसरे कर्मयोगसे !!२४

ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना !

अन्ये साङ्ख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे !!

पर जो अनभिज्ञ ऐसे सुनके औरोंसे उपासते !

वे श्रुतिपरायण भी मृत्युका अतिक्रमण करते २५

अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते !

तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः !!

स्थावर जंगम जो भी उद्भव पाते हैं प्राणी !

क्षेत्र व क्षेत्रज्ञ योगसे उसे जानो भरतमणि !!२६

यावत्सञ्जायते किञ्चित्सत्त्वं स्थावरजङ्गमम् !

क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ !!

नाशवान सब जीवोंमें समरूप से जो देखता !

वह देखता उनमें बैठे अविनाशी परमेश्वरको !२७

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम् !

विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति !!

चूंकि देखकर ईश्वरकी सर्वत्र सम अवस्थिति !

नहीं मारता स्वयं स्वयंको फिर पाता परंगति !२८

समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम् !

न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परा गतिम् !!

हर प्रकार होती हुई क्रियाएँ प्रकृति द्वारा ही !

जो देखे ऐसा स्वयंको अकर्ताको देखता वही !!२९

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वश: !

य: पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति !!

जब जीवोंके भिन्न रूप एक प्रकृतिमें पाता है !

तथा विस्तार उसीसे तब ब्रह्म को पा जाता है !३०

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति !

तत एव च विस्तारं ब्रह्म सम्पद्यते तदा !!

अनादि निर्गुण होनेसे वह अव्यय परमात्मा !

शरीरस्थ भी कौन्तेय न करता न लिप्त होता !३१

अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्यय: !

शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते !!

जैसे सर्वव्यापी खे सूक्ष्म होनेसे नहीं घुलता !

सर्वत्रस्थित आत्मा वैसे देह संग नहीं घुलता !३२

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते !

सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते !!

जैसे रवि एक यह पूरा लोक उजागर करता !

वैसे क्षेत्री हे भारत सारा क्षेत्र उजागर करता !३३

यथा प्रकाशयत्येक: कृत्स्नं लोकमिमं रवि: !

क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत !!

जीवगतिमोक्षएवं क्षेत्र क्षेत्रज्ञके इस अंतरको !

जो जानता ज्ञानचक्षुसे वो पाता परमेश्वर को!३४

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा !

भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम् !!

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : चौदह

श्रीभगवान् बोले -

फिरसे मैं बताऊंगा ज्ञानों में ज्ञान परम उत्तम !

इसे पाकर मुनिगण जगसे पा गए सिद्धि परम !!१

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम् !

यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः !!

इस ज्ञानके आश्रय से जो मेरा साधर्म्य पाते !

न सर्गमें जन्म लेते एवं प्रलयमें दुःख न पाते !!२

इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः !

सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च !!

महद्ब्रह्म मेरा उद्गम है मैं गर्भ रखता हूँ उसमें !

उससे सारे प्राणीगण हे भारत अभ्युदय पाते !!३

मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम् !

सम्भवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत !!

सब योनियोंमें कौन्तेय जितने देह प्रकट होते !

उनकी माता महद्ब्रह्म है बीजप्रदाता पिता मैं !४

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः !

तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता !!

प्रकृतिसे उद्भूत हैं सत्त्व रज तम गुण ये तीनों !

बांध लेते शरीरी अव्ययको शरीरमें महाबाहो !!५

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः !

निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम् !!

उनमें सत्त्व स्वच्छ होनेसे निर्विकार दीपक है !

सुख एवं ज्ञान लेपसे अनघ बनाता बन्धक है !!६

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम् !

सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन भारत !!

रज रागरूप जानो तृष्णा आसक्तिसे आता !

कौन्तेय वह देहीको कर्मासक्तिसे बांध देता !!७

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम् !

तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देह्निनम् !!

तमको अज्ञानज जानो देह्यियोंके मोह्दाता !

प्रमाद आलस व निद्रासे भारत उसे बांधता !! ८

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोह्नं सर्वदेह्निनाम् !

प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत !!

सुखमें सत्त्व व कर्ममें रज लगाकर जय पाता !

तम तो ज्ञानको प्रमादसे ढककर पार्थ जीतता !९

सत्त्वं सुखे सञ्जयति रजः कर्मणि भारत !

ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयत्युत !!

रज व तम को दबाकर भारत सत्त्व चढ़ता है !

ऐसे ही रज सत्त्व तमसे एवं तम भी बढ़ता है !१०

रजस्तमश्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत !

रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा !!

जब देहके सब द्वारोंमें ज्ञान प्रकाश जगता है !

तब जानिये इस देहमें सत्त्व गुण बढ़ा होता है !!११

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्प्रकाश उपजायते !

ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्त्वमित्युत !!

कर्मारम्भ स्पृहा अशांति लोभ एवं प्रवृत्ति !

रज बढ़नेसे भरतश्रेष्ठ ये सारे पाते हैं वृद्धि !!१२

लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा !

रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ !!

मोह और अप्रवृत्ति एवं प्रमाद व अप्रकाश !

तम बढनेसे कुरुनन्दन ये करते है विकास !!१३

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च !

तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन !!

जब सत्त्व बढ़ा होता है एवं यदि लय पाता है !

श्रेष्ठ विदोंके स्वच्छ लोकमें तब देही जाता है !!१४

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत् !

तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते !!

रज प्रभावमें मरनेसे कर्मासक्तमें जन्म लेता !

एवं लीन हो तममें तो मूढयोनिमें जन्म लेता !!१५

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते !

तथा प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते !!

कहते है सत्कर्मोंका निर्मल व सात्त्विक परिणाम

राजसका फल दु:ख होता एवं तामस का अज्ञान

कर्मण: सुकृतस्याहु: सात्त्विकं निर्मलं फलम् !

रजसस्तु फलं दु:खमज्ञानं तमस: फलम् !!१६

सत्त्व गुणसे ज्ञान उपजे एवं रज देता है लोभ !

तथा तमगुणसे उपजते मूढता प्रमाद व मोह !!१७

सत्त्वात्सञ्जायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च !

प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च !!

सत्त्व गुणी ऊपर उठते राजस मध्यमें रहते !
जघन्यवृत्तिवाले तामस अधोगति को पाते !!१८
उर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः !
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः !!
सिवा गुणोंके जब द्रष्टा अन्य कर्ता नहीं देखता !
और गुणोंसे परे जानता मेरा रूप वह पा लेता !!
नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टानुपश्यति !
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति !!१९
देहबीज इन तीन गुणोंको देही जो पार करता !
जन्म मरण जरा दुखोंसे मुक्त हो सुधा भोगता !!२०
गुणानेतानतीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान् !
जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते !!
अर्जुन बोले -
तीन गुणोंसे मुक्त जनके लक्षण वृत्ति क्या होते !
एवं प्रभु इन तीन गुणोंसे अतिक्रमण होता कैसे!
कैर्लिङ्गैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्रभो !

किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्तते !! २१

श्रीभगवान् बोले -

प्रभा प्रवृत्ति एवं मोहके पाण्डव जग जाने पर !

द्वेष न करते एवं इच्छा न करते मिट जाने पर !!२२

प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव !

न द्वेष्टि सत्प्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति !!

उदासीन सा रहनेवाला जो गुणोंसे नहीं डिगता !

गुण ही राज रहे यह मान स्थित न चेष्टा करता !

उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते !

गुणा वर्तन्त इत्येव योऽवतिष्ठति नेङ्गते !! २३

स्वस्थित दुःखसुख सम ढेला रोड़ा सोना सम !

धीर प्रियाप्रियमें सम निंदा निजस्तुतिमें सम !२४

मान अपमानमें समान मित्र शत्रु दलोंमें सम !

सब आरम्भोंका त्यागी गुणातीत कहाता वह !२५

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः !

तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः !!

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः !

सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः स उच्यते !!

एवं बिना भटकते जो भक्तियोगसे मुझे सेवता !

इन गुणोंसे दूर सर्वतः ब्रह्मका वह पात्र बनता !!२६

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते !

स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते !!

कारण पात्र मैं ब्रह्मका एवं अव्यय अमृतका !

एवं शाश्वत धर्मका और एकान्तिक सुखका !२७

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : पन्द्रह

श्रीभगवान् बोले -

ऊपर मूल नीचे डालका पीपल अक्षय कथित !

इसके पत्ते छन्द उसे जो जानता वह वेदवित् !!१

उर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् !

छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित् !!

खिले डाल उसके नत ऊंचे गुणबढे कामप्रवाल

कर्मपाशकी नीचे ऊपर नरलोकमें जड़ें विशाल२

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः !

अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके !!

ऐसा रूप यहाँ न मिलता न मूल न वास न सर !

इस पीपलके रूढ़मूलको असङ्ग शस्त्रसे भेदकर!

न रूपमस्य तथोपलभ्यते नान्तो नादिर्न च सम्प्रतिष्ठा !

अश्वत्थमेनं सुविरूढ़मूलमसङ्गशस्त्रेण दृढ़ेन छित्वा !!३

फिर उस गंतव्य पद व आदि पुरुषकी शरण ले !

इससे पुराणी सृष्टि फैली जहाँ गये फिर न आते !

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः !

तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी !! ४

मोहमानसे सङ्गदोषसे काममुक्त नित ईशचिंतक !

सुखदु:खवाले द्वन्द्वमुक्त ज्ञानी पाते वो अक्षयपद

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः !

द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदु:खसञ्ज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् !! ५

सूर्य उसे न करे भासित न पावक न शशांक !

जहाँ जाकर नहीं लौटते वही मेरा परम धाम !!६

न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को नपावकः !

यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमो मम !!

जीव रूप इस लोक में मेरा ही अंश सनातन !

प्रकृतिगत छः इन्द्रियोंको मनसंग देता कर्षण !!७

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः !

मन:षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति !!

ईश्वर देही जैसे वायु गंधको आशयसे ले जाता !
जहाँसे निकलता इन्हें लेकर पाये देहमें जाता !८

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः !
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् !!

कान चक्षु जीभ सहित त्वचा एवं नासिकासे !
विषय सेवन करता है जीव यह मनके सहारे !!९

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च !
अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते !!

छोड़ते अथवा रहते या भोगते जो गुणवाले !
मूढ मानस नहीं जानते देखते ज्ञानचक्षुवाले !!१०

उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम् !
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः !!

यत्नशील योगीजन स्वयंस्थित इसे देखते !
पर अचेत अशुद्धात्मा यत्नसे भी नहीं देखते !११

यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् !
यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतस: !!

सूर्य में सन्निहित तेज भासता है सारे जगको !
जो चन्द्रमें व अग्निमें मेरा जानो उस तेजको !१२

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम् !
यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम् !

भूमें जाकर जीवोंको मैं ओजसे धारण करता !
रसरूप सोम बनकर पादपोंका पोषण करता !१३

गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा !
पुष्णामि चौषधी: सर्वा: सोमो भूत्वा रसात्मक:!

जठरानल बन जीवों के देहका मैं ले आधार !
प्राण अपानसे मिलकर अन्न पचाता विधिचार !१४

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रित: !
प्राणापानसमायुक्त: पचाम्यन्नं चतुर्विधम् !!

सबके हृदयमें मैं ही राजित मुझसे स्मृति अपोहन ज्ञान !

मैं ही ज्ञेय सब वेदों द्वारा तत्वनियंता व वेदविद्वान !१५

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्त: स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च !

वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम्!

दो ही पुरुष इस लोक में क्षर व अक्षर नामके !

सारे जीव क्षर कहाते एवं अक्षर बीच विराजे १६

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च !

क्षर: सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते !!

पुरुष उत्तम दूसरा ही परमात्मा वो कहलाता !

अव्यय ईश्वर त्रिलोकमें जो प्रविष्ट हो पालता !१७

उत्तम: पुरुषस्त्वन्य: परमात्मेत्युदाहृत: !

यो लोकत्रयमाविश्य बभर्त्यव्यय ईश्वर: !!

चूंकि मैं क्षरसे अतीत हूँ एवं अक्षरसे भी उत्तम !
अतः लोकमें और वेदमें कहलाता हूँ पुरुषोत्तम!
यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः !
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः !!१८

एवंविध जो विवेकी मुझे पुरुषोत्तम जानता !
वह सर्वज्ञ पूर्ण भावसे मुझे ही भारत भजता !१९
यो मामेवमसम्मूढो जानाति पुरुषोत्तमम् !
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत !!

मैंने यह शास्त्र गूढतम अनघ ऐसे बतलाया !
इसे जानकर बुद्धिमान कृतकृत्य हो पाया !!२०
इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ !
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत !!

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : सोलह

श्रीभगवान् बोले -

निर्भयता चित्तशोधन ज्ञान योगका दृढ़स्थापन !

दान यज्ञ वृत्तिसरलता स्वाध्याय तप कामदमन !!१

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः !

दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् !!

सत्य अहिंसा क्रोधाभाव त्याग शांति अपरदूषण

जीवदया लज्जा अलोभ कोमल भाव निश्चलपन

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् !

दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् !!२

तेज क्षमा धैर्य स्वच्छता निर्वैरता अकृतमान !

दैव सम्पदालब्ध जनोंके लक्षण ये कुरुनंदन !!३

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता !

भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत !!

आडम्बर अभिमान मद एवं क्रोध व अकड़पन!
ज्ञानाभाव ये सब पार्थ आसुरी सम्पदके लक्षण४

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च !
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ सम्पदासुरीम् !!

दैवी सम्पत्ति मोक्षकी आसुरी बंधन है मान्यता !
दैवी सम्पदप्राप्त हुए हो पाण्डव मत करो चिंता५

दैवी सम्पद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता !
मा शुचः सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव !!

इस लोकमें जीवसृष्टि दैव आसुर ही दो प्रकार !
दैवसर्ग कहा सविस्तार सुनो पार्थ मेरेसे आसुर ६

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च !
दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे श्रृणु !!

क्या वृत्ति हो क्या नहीं आसुरजन नहीं जानते !
न स्वच्छता न शुभाचार एवं सत्य न उनमें होते !!७

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः !
न शौचं नापि चाचारोन सत्यं तेषु विद्यते !!

वे कहते जग असत्य न आधार न होता ईश्वर !

पुरुष प्रकृति योग बिन काम कारण नहीं इतर !८

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम् !

अपरस्परसम्भूतं किमन्यत्कामहैतुकम् !!

इस दृष्टिके आश्रयवाले अल्पबुद्धि स्वयंनष्ट !

उग्र कर्मवाले होते ये जगवैरी करते अनिष्ट !! ९

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः !

प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः !!

अपूरणीय इच्छा लेकर दम्भ अभिमान मदभरे !

मोहवश दुराग्रह लेकर व्रत अशुद्धवाले फिरते !!१०

काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः !

मोहाद् गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः !!

अन्ततक लिए रहते चिंताओं का अकूत भार !

निश्चय करते भोग कामना यही है पूरा संसार !!११

चिन्तामपरिमेयं च प्रलयान्तामुपाश्रिताः !
कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः !!
आशाके शतबंधमें कामक्रोध जीवन आधार !
भोगहेतु अर्थसंग्रह न्यायहीन इच्छा व्यवहार !१२
आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः !
ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान् !!
आज मुझे यह प्राप्त है यह मनोरथ पूरा होगा !
इतना धन तो पास है इतना मुझे पुनः मिलेगा !!१३
इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्यसे मनोरथम् !
इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् !!
मारा गया वह शत्रु मुझसे मारेंगे औरोंको भी !
मैं ईश्वर हूँ मैं भोगी और सिद्ध बलवान सुखी !!१४
असौ मया हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि !
ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान्सुखी !!

मैं धनी परिजनपूरित हूँ कौन अन्य मेरे समान !

यज्ञ दान व मोद करूँ यही अज्ञानी मूढप्रमाण !!१५

आढ्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया!

यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिता: !!

कई भ्रमोंके चित्तवाले मोहजालसे घिरे हुये !

कमक्रोधमें निमग्न दुखद नरकमें जा गिरते !!१६

अनेकचित्तविभ्रान्ता: मोहजालसमावृता: !

प्रसक्ता: कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ !!

स्वसम्मानकी अपेक्षा अकड़े धन मद मान भरे !

दम्भमेंमें बिना विधि वे यज्ञ करते नाम मात्रके !!१७

आत्मसम्भाविता: स्तब्धा: धनमानमदान्विता: !

यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम् !!

अहंकार बल काम घमंड एवं क्रोधके वशमें !

आप पराये देहों में मुझसे दोषसे द्वेष करते !!१८

अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिता: !

मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽ अभ्यसूयका: !!

द्वेषी क्रूर और नराधम जगतमें अमंगल जो !

डालता हूँ बार बार असुर योनियों में उनको !!१९

तानहं द्विषत: क्रूरान्संसारेषु नराधमान् !

क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु !!

जन्म जन्ममें मूढ जन आसुरी योनिको पाते !

मुझे न पाकर कौन्तेय पुनः अधोगतिमें जाते !२०

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि !

मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम् !!

तीन प्रकार ये नरकद्वार काम क्रोध व लोभ

पतन करते जीवोंका सो तीनोंसे करे बिछोह!२१

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मन: !

काम: क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् !!

इन तीनों तम द्वारोंसे हे कौन्तेय मुक्त होकर !

आत्महित करता हुआ परागतिको पाता नर !!२२

एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः !

आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् !!

शास्त्र विधान त्यागकर मनमाना चलता है जो !

न वह पाता सिद्धिको न सुख न परमगति को !!२३

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः !

न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् !!

अतः कार्याकार्य निश्चयमें तेरे हित शास्त्रप्रमाण !

उक्त शास्त्रविधि जानकर जगमें कर्मका विधान !

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ !

ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि !!२४

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : अठारह

अर्जुन बोले -

हे महाबाहु संन्यासका तत्व जाननेकी है इच्छा !

हे हृषीकेश हे केशिनिषूदन एवं भिन्न त्यागका!१

सन्न्यासस्य महाबाहो तत्त्वमिच्छामि वेदितुम् !

त्यागस्य च हृषिकेश पृथक्केशिनिषूदन !!

श्रीभगवान् बोले -

काम्यकर्मके त्यागको ज्ञानीजन सन्यास मानते !

कर्मफलके पूर्णत्यागको विद्वत्जन त्याग कहते२

कर्मोंको दोषवत् कई मनीषी कहते त्याज्य है !

और दूसरे मानते यज्ञ दान तप नहीं त्याज्य है !३

काम्यानां कर्मणां न्यासं सन्न्यासं कवयो विदु: !

सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणा: !!

त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिण: !

यज्ञदानतप:कर्म नत्याज्यमिति चापरे !!

इनमें त्यागको सुनो जो मेरा निश्चय भरतश्रेष्ठ !
त्याग तीन प्रकारका ही कहा गया पुरुषश्रेष्ठ !!४

निश्चयं श्रृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम !
त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः सम्प्रकीर्तितः !!

यज्ञ दान तपकर्म तो त्याज्य नहीं आवश्यक है !
यज्ञ तप व दान ही मनीषियोंके शुचिकारक है !५

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् !
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् !!

ये कर्म व अन्य भी फल एवं आसक्तिरहित !
कर्तव्य ही पार्थ मेरा उत्तम मत यह निश्चित !!६

एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च !
कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् !!

नियत कर्मका त्याग तो उचित नहीं कहा जाता !
मोहवश उसका परित्याग तामसी माना जाता !!७

नियतस्य तु सन्न्यास: कर्मणो नोपपद्यते !

मोहात्तस्य परित्यागस्तामस: परिकीर्तित: !!

दु:ख मानकर कर्मको श्रमभयसे जो न्यास करे !

वो राजस त्याग करके न ही फलकी आस करे !!८

दु:खमिति यत्कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत् !

स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत् !!

कर्तव्य ही मानकर नियत कर्म जो किया जाता

फलासक्ति छोड़ अर्जुन वो त्याग सात्त्विक माना

कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन !

सङ्गं त्यक्त्वा फलं चैव स त्याग: सात्त्विको मत:!

अशुभ कर्मसे द्वेष न करते न शुभमें लीन होता !

आत्मरूपमें स्थित त्यागी ज्ञानी भ्रमहीन होता !!१०

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते !

त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशय: !!

चूंकि त्याग नहीं सकता देही कर्मोंको पूर्णतः !

अतः कर्मफलत्यागी कहलाता त्यागी वस्तुतः !!११

न हि देहभृतां शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः !

यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते !!

इष्ट अनिष्ट एवं मिश्र कर्मफल तीन श्रेणीके !

अत्यागी मरे तोभी किंतु कभी न सन्यासीके !!१२

अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम् !

भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु सन्न्यासिनां क्वचित् !!

पा ॅच कारण कहे गए हैं कर्मांतक सांख्यसूत्रमें !

एवं सारे कर्मसिद्धिके महाबाहु समझो मुझसे !!१३

पञ्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे !

साङ्ख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम् !

अधिष्ठान तथा कर्ता एवं करण भिन्न प्रकारके !

एवं भिन्न भिन्न चेष्टाएँ तथा पंचम दैव यहाँ के !!१४

अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम् !

विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम् !!

तन मन वाणीसे देही जो भी कर्म शुरू करते !

न्यायोचित या विपरीत ये पॉच कारण उसके !!१५

शरीरवाकङ्मनोभिर्यत्कर्म प्रारभते नरः !

न्याय्यं वा विपरीत वा पञ्चैते तस्य हेतवः !!

किंतु इनके होते भी आत्मा को ही हेतु कहता !

वह दुर्मति अशुद्धबुद्धि सही सही नहीं देखता !!१६

तत्रैवं सति कर्तारमात्मानं केवलं तु यः !

पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मतिः !!

जिसमें कर्ताभाव नहीं जिसकी बुद्धि लिप्त नहीं !

वह न मारता न बंधता इन जीवोंको मारकर भी !

यस्य नाहङ्कृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते !

हत्वपि स इमाॅल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते !!

ज्ञान ज्ञेय परिज्ञाता तीन प्रकार ये कर्मप्रेरणा !

करण कर्म कर्ता इन तीनोंसे ही कर्म जुटाना !!१८

ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधः कर्मचोदना !

करणं कर्म कर्तेति त्रिविधः कर्मसङ्ग्रहः !!

ज्ञान कर्म एवं कर्ता तीन तीन हैं गुणभेदसे !

गुणशास्त्रमें वर्णित ये भी सुनो उसी रूप में !!१९

ज्ञानं कर्म च कर्ता च त्रिधैव गुणभेदतः !

प्रोच्यते गुणसङ्ख्याने यथावच्छृणु तान्यपि !!

भिन्न भिन्न जीवोंमें अक्षय अखण्ड भाव एक !

जिससे देखा जाता वो ज्ञान समझो सात्त्विक !!२०

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते !

अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकं !!

किंतु सभी प्राणियोंमें भिन्न भिन्न भावों को !

भिन्न रूपमें जानता वह ज्ञान राजस समझो !!२१

पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान् !
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम् !!

पर जो एक देह में ही पूर्णवत् आसक्त रहता !
तत्व एवं युक्तिहीन वह क्षुद्र तामस कहलाता !!२२

यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन्कार्ये सक्तमहैतुकम् !
अतत्त्वार्थवदल्पं च तत्तामसमुदाहृतम् !!

शास्त्रोक्त फलकामहीन जो कर्म किया जाता !
रागद्वेष से दूर होकर वह सात्त्विक कहलाता !!२३

नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम् !
अफलप्रेप्सुना कर्म यत्ततसात्त्विकमुच्यते !!

किंतु जो फलकामसे और अहं से किया जाता !
पुनः बहुत श्रमवाला कर्म वह राजस कहलाता !!

यत्तु कामेप्सुना कर्म साहङ्कारेण वा पुनः !
क्रियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम् !!२४

बिन देखे परिणामहानि जो हिंसा पौरुष तथा !

मोहवश किया गया कर्म वो तामस कहलाता !!२५

अनुबन्धं क्षयं हिंसामनवेक्ष्य च पौरुषम् !

मोहादारभ्यते कर्म यत्तत्तामसमुच्यते !!

मुक्त राग व कर्तापनसे धैर्य उमंगसे भरा होता !

सिद्धि असिद्धिसे विलग कर्ता सात्त्विक होता !!२६

मुक्तसङ्गोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः !

सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः कर्ता सात्त्विक उच्यते !!

रागी कर्मफलकामी लोभी हिंसक मैला रहता !

हर्षशोकमें रहनेवाला कर्ता राजस कहलाता !!२७

रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः !

हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः उच्यते !!

अयोगी असभ्य शठ प्रत्युपकारी सुस्त रहता !

दु:खी मूढ देरका आदी कर्ता तामस कहलाता !!२८

अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठोऽनैष्कृतिकोऽलसः!

विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते !

बुद्धि एवं धैर्य के भिन्न भिन्न हैं तीन प्रकार !

सुनो धनञ्जय पूर्णतः कहता हूँ गुणानुसार !!२९

बुद्धेर्भेदं धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं श्रृणु !

प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्त्वेन धनञ्जय !!

प्रवृत्ति व निवृत्तिको कार्याकार्य व भयाभयको !

बुद्धि पार्थ वो सात्विकी जो जाने मोक्षबंधको !!३०

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये !

बन्धं मोक्षं च या वेत्ति बुद्धि सा पार्थ सात्विकी !

जिससे धर्म अधर्मको पार्थ कार्य अकार्य भी !

सही सही न जाना जाये वह बुद्धि है राजसी !!३१

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च !

अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी !!

घिरी हुई अज्ञानसे अधर्म ही धर्म है यह मानती !
हर वस्तु पर उलटा अर्थ पार्थ बुद्धि वह तामसी !

अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसावृता !
सर्वार्थान्विपरीतांश्च बुद्धि: सा पार्थ तामसी !!३२

मन प्राण इन्द्रिय क्रियाएँ जिससे संयमित होती !
समतावान अडिग वह धृति पार्थ है सात्त्विकी !!३३

धृत्या यया धारयते मन:प्राणेन्द्रियक्रिया: !
योगेनाव्यभिचारिण्या धृति; सा पार्थ सात्त्विकी !!

जो धर्म धन भोगको आसक्ति से धारण करती !
फलकामना अतिप्रबल पार्थ धृति वह राजसी !!३४

यया तु धर्मकामार्थान्धृत्या धारयतेऽर्जुन !
प्रसङ्गेन फलाकाङ्क्षी धृति: सा पार्थ राजसी !!

स्वप्न विषाद भय शोक एवं जो मद को भी !
नहीं छोड़ती दुर्बुद्धि पार्थ धृति वह तामसी !!३५

यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च !

न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी !!

अब सुनो सुखको मेरेसे भरतश्रेष्ठ तीन प्रकार !

अभ्याससे रमण जिसमें एवं दुखका निस्तार !!३६

जो पहले विष जैसा और अंतमें सुधा समान !

आत्मज्ञानसे उपजा वह सुख सात्त्विक जान !!३७

सुखं त्विदानीं त्रिविधं श्रृणु मे भरतर्षभ !

अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति !!

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम् !

तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम् !!

इन्द्रिय काम योगजन्य जो पहले अमृत जैसा !

विष सा परिणाम वह सुख राजस कहा गया !!३८

विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम् !

परिणामे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम् !!

जो आरम्भमें और अंतमें मनको मोहित करता !

निद्रालस्य प्रमादभूत वह सुख तामस कहलाता !

यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः !

निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम् !! ३९

न वह वस्तु धरा स्वर्ग में एवं पुनः देवगणोंमें !

जो मुक्त हो प्रकृतिके जाए इन तीन गुणों से !!४०

न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः !

सत्त्वं प्रकृतिजैर्मुक्तं यदेभिः स्यात्त्रिभिर्गुणैः !!

हे परन्तप ब्राह्मण क्षत्री वैश्य एवं शूद्र वर्णका !

वर्गीकरण किया गया कर्म प्रकृति गुणों द्वारा !!४१

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परन्तप !

कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः !!

मनसंयम कामदमन तप स्वच्छता क्षमा सरलता !

सहज ब्राह्मणकर्म है ज्ञान विज्ञान व आस्तिकता !!

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च !

ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् !!४२

तेज धीरज राजकौशल वीरता रणमें अडिगता !

दान व शासकप्रवृत्ति सहज कर्म हैं क्षत्रियका !!४३

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् !

दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् !!

कृषि गोरक्षा व्यापार वैश्यका नैसर्गिक काम !

एवं सेवा सब वर्गोंकी शूद्रका नैसर्गिक काम !!४४

कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् !

परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् !!

अपने अपने कर्ममें निरत मानव सिद्धि पाते !

सुनो वह जो निज कर्ममें रत जैसे सिद्धि पाते !!४५

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः !

स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु !!

जहाँसे जीवोंका उद्भव जिससे पूर्ण यह जग सारा !

उसे पूजकर सिद्धि पाते मानव निज कर्मों के द्वारा !!४६

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम् !
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवाः !!

निज धर्म गुणरहित स्वनुष्ठित परधर्मसे उत्तम !

पाप नहीं पाता है करता हुआ स्वभावज कर्म !!४७

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् !

स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् !!

सहज कर्म त्याज्य नहीं कौन्तेय दोषयुक्त भी !

जैसे अग्नि धूमसनी है सारे कर्म दोषयुक्त ही !!४८

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत् !

सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः !!

निर्लिप्त बुद्धि आत्मजयी सदैव विगतकामना !
परम नैष्कर्म्य सिद्धिको पा लेता सन्यास द्वारा !!४९

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः !
नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां सन्न्यासेनाधिगच्छति !!
सिद्ध जैसे पा लेता कौन्तेय मुझसे वह जानो !
उसी प्रकार संक्षेपमें ज्ञानके परमपद ब्रह्मको !!५०
सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाप्नोति निबोध मे !
समासेनैव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा !!
सात्त्विक बुद्धिसे धैर्यसे चित्तको अधीन कर !
शब्दादि सुख छोड़कर रागद्वेषसे मुक्त होकर !!५१
एकान्तसेवी अल्पाहारी तनमनवाणी साधकर !
ध्यानयोगके परायण वैराग्यको नित थामकर !!५२
अहंकार बल दर्प कामना क्रोध परिग्रह दूरकर !
ब्रह्म प्राप्तिके योग्य होता ममताहीन शांत नर !!५३
बुद्धिया विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च !
शब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वा रागद्वेषौ व्युदस्य च !!

विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्कायमानसः !

ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः !!

अहङ्कारं बलं दर्प कामं क्रोधं परिग्रहम् !

विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते !!

ब्रह्रूप प्रसन्न साधक न चिंता न इच्छा करता !

सब प्राणियोंमें समदर्शक मेरी पराभक्ति पाता !!५४

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति !

समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् !!

जो हूँ तत्वसे एवं जितना मुझे भक्तिसे जानता !

फिर तत्वसे मुझे जानकर शीघ्र ही समा जाता !

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः !

ततो मांक्ष तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम् !!५५

मेरे आश्रित सर्वदा सब कर्म करता हुआ भी !

मेरी अनुकम्पासे शाश्वत पद पाता अविनाशी !!५६

सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः !
मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम् !!

सारा कर्म मुझे चित्त से सौंपकर मेरे परायण !
बुद्धियोगके आश्रयसे हो जा सतत मेरा मन !!५७

चेतसा सर्वकर्माणि मयि सन्न्यस्य मत्परः !
बुद्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तः सततं भव !!

मेरा चित्त सब दुर्गोंको मेरी दयासे तर जायेगा !
और अगर न सुने अहंवश तो नष्ट हो जायेगा !!५८

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि !
अथ चेत्त्वमहङ्कारान्न श्रोष्यसि विनङक्ष्यसि !!

जिस अहंके सहारे मानते यह न युद्ध करूँगा !
तेरा निश्चय मिथ्या यह स्वभाव तुझे लड़ा देगा !!५९

यदहङ्कारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे !
मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति !!

स्वभावजनित निज कर्मों से बंधा हुआ मोहवश !

चाहते न जो युद्ध करूँ वो करोगे होकर विवश !

स्वभावजेन कौन्तेय निबद्ध: स्वेन कर्मणा !

कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात्करिष्यस्यवशोऽपि तत् !!६०

सब जीवोंके हृदय देशमें अर्जुन ईश्वर बसता है !

यंत्रारूढ सब जीवोंको मायासे नचाता रहता है !

ईश्वर: सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति !

भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढ़ानि मायया !! ६१

जाओ उसकी ही शरणमें सब भावोंसे भारत !

उसकी कृपासे पराशांति पाओगे पद शाश्वत !!६२

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत !

तत्प्रसादात्परां शांतिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् !!

यह गूढ से ज्ञान गूढतर मैंने समझाया तुमको !

समग्रतासे इसमें विमर्शसे जो चाहो वही करो !!६३

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया !
विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु !!
सबसे परम गूढ वचन पुन: सुन लो मुझसे !
मेरे प्रिय हो इसलिए कहूँगा हितकर ये तुझे !!६४
सर्वगुह्यतमं भूय: श्रृणु मे परमं वच: !
इष्टोऽसि मे दृढ़मिति ततो वक्ष्यामि ते हितम् !!
मेरामन मेरा भक्त बनो मेरा पूजक मुझे नमो !
मुझे मिलोगे सच कहूँ तुमसे तुम मेरे प्रिय हो !!६५
मनमना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु !
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे !!
सब धर्मोंको छोड़कर मेरी एक शरणमें आओ !
मैं तुझे सब पापोंसे मुक्त करूँगा न शोक करो !!
सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज !
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच: !!६६

न इसे अतपसीसे न कभी अभक्तसे कहना !

एवं जो न सुनना चाहे और मुझे जो दूषता !!६७

इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन !

न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति !!

जो इस परमगूढ वादको मेरे भक्तोंमें कहेगा !

मुझमें पराभक्ति कर निभ्रम मुझे ही पायेगा !!६८

य इदं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति !

भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः !!

मेरा अतिप्रियकर्ता नरों में कोई उन जैसा नहीं !

एवं भूपर उनसे प्रियतर मेरा अन्य होगा नहीं !!६९

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः !

भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि !!

जो हमारे इस धर्ममय चर्चाका पठन करेगा !

ज्ञानयज्ञसे मैं उससे पूजित हूँगा यह मत मेरा !!७०

अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः !

ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः !!

श्रद्धावान दोषरहित जो नर इसे सुन भी लेगा !

वो भी मुक्त हो पुण्यकृतोंके शुभलोक पायेगा !!७१

श्रद्धावाननसूयश्च श्रृणुयादपि यो नरः !

सोऽपि मुक्तः शुभाॅंल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम् !!

हे पार्थ क्या तुमने एकाग्र चित्तसे इसको सुना

हे धनंजय क्या तेरा मोह अज्ञानका नष्ट हुआ !!७२

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा !

कच्चिदज्ञानसम्मोहः प्रनष्टस्ते धनञ्जय !!

अर्जुन बोले -

मैंने आपकी कृपासे स्मृति प्राप्त की मोह गया !

गतसंदेह स्थित हूँ अच्युत आपकी बात करूँगा !

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत !

स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव !!७३

संंजय बोले -

इस प्रकार श्रीवासुदेवका एवं पार्थ महात्माका !

यह अद्भुत संवाद परस्पर रोमहर्षक मैंने सुना७४

इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः !

संवादमिममश्रौषमद्भुतं रोमहर्षणम् !!

व्यासदेव की कृपा से परम गूढ इस योगको !

स्वयं मैं कहते सुना सरूप योगेश्वर कृष्णको !!७५

व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्यमहं परम् !

योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयम् !!

राजन् केशव अर्जुनका अद्भुत पावन संवाद !

हर्षित होता बार बार व इसे कर करके याद !!७६

राजन्संस्मृत्य संस्मृत्य संवादमिममद्भुतं !

केशवार्जुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः !!

राजन् अति अद्भुत रूप उस हरि भगवान के !

याद कर कर बार बार महाचकित व हर्षित मैं !!७७

तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः !
विस्मयो मे महान् राजन् हृष्यामि च पुनः पुनः !!
जहाँ योगेश्वर कृष्ण हैं एवं जहाँ धनुर्धर पार्थ !
वहाँ विजय श्री विभूति अटल नीति मेरा मत !!७८
यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः !
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम !!

ॐ तत् सत्

अथ अध्याय : सतरह

अर्जुन बोले -

जो शास्त्रविधि छोड़कर पूजन करते श्रद्धापूर्वक
उनकी निष्ठा कैसी कृष्ण सत्त्व रज या तमरूपक

ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः !
तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वमाहो रजस्तमः !!

श्रीभगवान् बोले -

वृत्तिजनित वह श्रद्धा तीन होती मानवकी !
सुनो उन्हें जो सात्त्विकी राजसी एवं तामसी !!२

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा !
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां श्रृणु !!

भारत श्रद्धा होती है सबके संस्कार अनुसार !
मानव तो श्रद्धामय है जैसी श्रद्धा वही प्रकार !३

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत !
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः !!

सात्विक पूजते देवोंको राजस यक्षराक्षसको !
अन्य तामस जन पूजते प्रेतों एवं भूतगण को !!४
यजन्ते सात्त्विका देवान्यक्षरक्षांसि राजसाः !
प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः !!
शास्त्रविधि के बिना जो मानव घोर तप करते!
अहंकार दम्भ में डूबे भोग आसक्ति हठ करते !५
देहस्थित पञ्चभूतको हृदयस्थित एवं मुझको !
सोखते अचेतन जो आसुरनिष्ठ उनको समझो !६
अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः !
दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः !!
कर्शयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः !
मां चैवान्तःशरीरस्थं तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान् !!
सबको तीन प्रकारके प्रिय होते हैं आहार !
एवं यज्ञ तप दान भी सुनो उनके ये प्रकार !! ७

आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः !
यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं श्रृणु !!

आयु शक्ति आस्तिकता निरोगता सुख मोद बढ़ाते !
सरस चिकने हृतपोषी ठोसाहार सात्त्विकको भाते !!८

आयुःसत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः !
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्विकप्रियाः !

कड़वे लवणी खट्टे तप्त तीखे रूखे दाह देते !
ये आहार राजसप्रिय शोक रोग दुःख जो देते !९

सड़ा हुआ शुष्क बासी तथा अप्रिय गंधवाले !
जूठा और अछूत भोजन प्रिय होते तामसके !१०

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत् !
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम् !!

बिना फलेच्छासे किया शास्त्रविधिका द्योतक !
यज्ञ ही कर्तव्य ऐसा यज्ञ सात्त्विक मनतोषक!!११

अफलाकाङ्क्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते !
यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विक !!
पर फलेच्छा बांधकर व दिखावा ही लक्ष्य हो !
ऐसा होनेवाला यज्ञ भरतश्रेष्ठ राजस समझो !१२
अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत् !
इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम् !!
अन्नदानबिन विधिहीन मंत्रहीन बिन दक्षिणाके !
श्रद्धाभाव से विरहित यज्ञ जो तामस कहलाते !!
विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम् !
श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते !! १३
देवविप्रगुरुसंतपूजा स्वच्छता व भाव सरलता !
ब्रह्मचर्य एवं अहिंसा तप शारीरिक कहलाता !!१४
देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम् !
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते !!

सत्यभाषण न उत्तेजक जो हितमें एवं सुहाते !
स्वाध्याय एवं अभ्यास वाणीके तप कहलाते!!१५
अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् !
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते !!
मनका आह्लाद सौम्यता स्वसंयम व मौनता !
निर्मलभाव व्यवहारमें मानस तप कहलाता !!१६
मन:प्रसाद: सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रह: !
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते !!
परम श्रद्धासे परिपूर्ण जो बिना फलकामना !
मानवसेवित तप वह सात्त्विक तीन भेदका !!१७
श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरै: !
अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तै: सात्त्विकं परिचक्षते !!
जो सत्कार मान पूजाहित दम्भसे किया जाता !
चंचल अस्थिर जगमें वह राजस तप कहलाता !!

सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत् !

क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवम् !!१८

कष्ट स्वयं या औरको देकर जो किया जाता !

मूढता से होनेवाला वह तप तामस कहलाता १९

मूढग्राहेणात्मनो यत्पीड्या क्रियते तपः !

परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम् !!

जो दान कर्तव्यसे ही उपकारसे न दिया जाता !

देश काल व पात्रपूरक वो सात्त्विक कहलाता !!२०

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे !

देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् !!

किंतु जो उपकारके बदले कष्टसे दिया जाता !

एवं लाभ उद्देश्यसे वह दान राजस कहलाता !!२१

यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः !

दीयते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतम् !!

देश काल व पात्र बिना जो दान दिया जाता !

असत्कार अवज्ञापूर्वक वह तामस कहलाता!२२

अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते !

असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम् !!

ॐ तत् सत् ये तीन रूप ब्रह्मवाचक माने गए !

सृष्टिकालमें वेद ब्राह्मण और यज्ञ इनसे आए !!२३

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः !

ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा !!

अतः यज्ञ तप दान क्रिया ॐ इस उच्चारणसे !

वेदवादी विधिकथित सतत ही आरम्भ करते !!२४

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपःक्रियाः !

प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम् !!

फल की कामना त्यागकर यज्ञ तप एवं दान !

इस तत् से करते अनेक कार्य जो मोक्षकाम !!२५

तदित्यनभिसन्धाय फलं यज्ञतप:क्रिया: !

दानक्रियाश्च विविधा: क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभि:!

ईशभाव व श्रेयभावमें सत् का प्रयोग होता !

एवं पार्थ यशकर्ममें सत् शब्दका योग होता !!२६

सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते !

प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्द: पार्थ युज्यते !!

यज्ञ दान एवं तप में स्थिरभाव सत् कहलाता !

एवं भागवत्कर्ममें भी इस सत् की मान्यता !!२७

यज्ञे तपसि दाने च स्थिति: सदिति चोच्यते !

कर्म चैव तदर्थीयं सदित्येवाभिधीयते !!

अश्रद्धासे दिया दान किया हवन व तप कार्य !

पार्थ असत् कहे नरके न लोकार्थ न परमार्थ !२८

अश्रद्धया हुतं दत्तंश्रतपस्तप्तं कृतं च यत् !

असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह !!

ॐ तत् सत्